६७ वर्षों से प्रकाशित आध्यात्मिक पुस्तक-माला

'कौल-कल्पतरु' चण्डी

कौल-कल्पतरु चण्डी

मन्त्र कल्पतरु पुष्प-२

'नाम'-मन्त्र-साधना-सहित

श्रीविष्णु-नाम-मन्त्र-साधना

प्रकाशक :

परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान

श्रीचण्डी-धाम, अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग-२११००६

भारतवासियों के 'मन' को 'दिव्य भावों' से भरने हेतु 'मन्त्र-शास्त्र' के रहस्यों को सरल-से-सरल रूप में बतानेवाली तीन महान् विभूतियाँ

परम पूज्य
गुप्तावतार 'बाबाश्री'

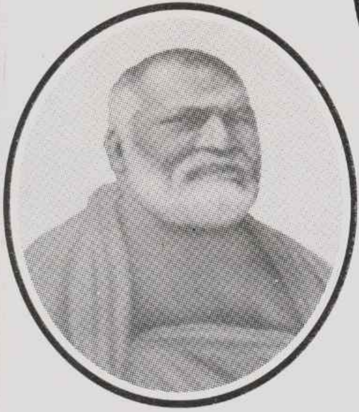

परम पूज्य 'राष्ट्र-गुरु'
श्री स्वामी जी महाराज

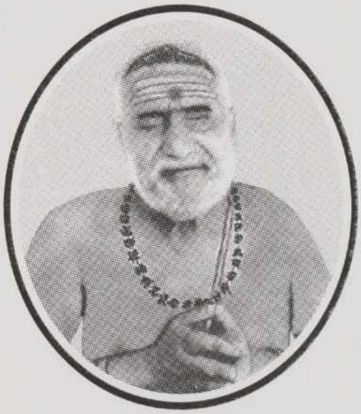

परम पूज्य
'कौल-कल्पतरु' पं० देवीदत्त शुक्ल

जिनके आशीर्वाद से
'चण्डी'-पुस्तक-माला का प्रकाशन ६७ वर्षों से निरन्तर हो रहा है।

☆

'चण्डी'-पुस्तक-माला का सदस्य बनकर
'मन्त्र-शास्त्र'-सम्बन्धी
प्रामाणिक जानकारी प्राप्त करें।

विशेष जानकारी के लिए सम्पर्क करें

श्रीचण्डी-धाम

अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग-०६ ☆ फोन ०५३२-२५०२७८३, ९२३५९१००७१
E-mail : Chandi_dham@rediffmail.com

६७ वर्षों से प्रकाशित आध्यात्मिक पुस्तक-माला

कौल-कल्पतरु चण्डी

'कौल-कल्पतरु'
पं० देवीदत्त शुक्ल
जयन्ती : वैशाख कृष्णा तृतीया
१२ अप्रैल, २००९

मन्त्र-कल्पतरु (पुष्प-२)

'नाम'-मन्त्र-साधना-सहित

वर्ष ६८ अङ्क २

श्रीविष्णु एवं उनके दशावतारों की 'नाम-मन्त्र-साधना'

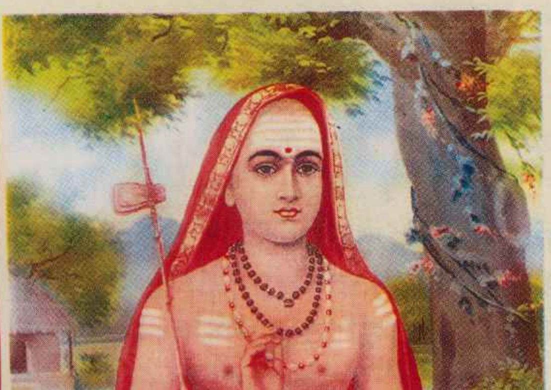

परम पूज्य प्रातः-स्मरणीय जगद्-गुरु आदि-शङ्कराचार्य जी की जयन्ती वैशाख शुक्ला पञ्चमी (२९ अप्रैल २००९) के पावन अवसर पर 'मन्त्र-कल्पतरु' पुष्प-२ के रूप में श्रीविष्णु एवं उनके दशावतारों की 'नाम-मन्त्र-साधना'-शारदा-तिलक तन्त्र, वृहत् तन्त्रसार, मेरु तन्त्र आदि ग्रन्थों के आधार पर प्रकाशित हो रही है।

श्रीविष्णु एवं उनके दशावतारों की 'नाम-मन्त्र-साधना' वैष्णव अर्थात् भगवान् विष्णु के उपासकों के लिए तो उपयोगी है ही, साथ ही शाक्तों अर्थात् भगवती के उपासकों के लिए भी महत्त्व-पूर्ण है।

'शाक्त'-सम्प्रदाय की उपासना में जहाँ निर्गुण, सूक्ष्म, परा उपासनाओं का विधान है, वहीं सगुण, स्थूल बाह्य, अवतार-उपासनाओं का भी विधान है। शाक्त-सम्प्रदाय की उपासनाएँ 'तन्त्रों' पर आधारित हैं और 'तन्त्रों' का स्पष्ट मत है कि 'पर-ब्रह्म'-एक है, अद्वैत है और निर्गुण है और उसकी प्राप्ति के लिए उसके पाँच गुणों के आधार पर 'पाँच सम्प्रदाय' हैं-१. शैव, २. शाक्त, ३. वैष्णव, ४. गाणपत्य एवं ५. सौर्य हैं। यही कारण है कि 'तन्त्रों' में पाँचों सम्प्रदायों से सम्बन्धित उपासना-प्रणालियों का विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है।

तन्त्रों में जहाँ 'शैव, शाक्त, वैष्णव, गाणपत्य एवं सौर्य' सम्प्रदायों के लिए अलग-अलग स्वतन्त्र ग्रन्थों की रचनाएँ हुई हैं, वहीं पाँचों को समाहित करते हुए संग्रह-ग्रन्थों की भी रचनाएँ हुई हैं क्योंकि मूलतः पाँचों सम्प्रदाय एक हैं, उनका लक्ष्य एक है-'एक, अद्वैत एवं निर्गुण पर-ब्रह्म की प्राप्ति'।

प्रातः-स्मरणीय आदि-शङ्कराचार्य एवं उनके गुरु पूज्य श्री गौड़पादाचार्य दोनों ने 'तन्त्रों' के उक्त मत के अनुसार ही पाँचों सम्प्रदायों के उपासकों के लिए नाना प्रकार की स्तुतियाँ, भाष्य आदि लिखे हैं। आदि-शङ्कराचार्य जी का इस सम्बन्ध में कृतित्त्व इतना विशाल है कि उन्हें तो 'पञ्च-देवोपासना' हेतु साक्षात् भगवान् शिव के अवतार-स्वरूप 'जगद्-गुरु' माना जाता है।

जगद्-गुरु आदि-शङ्कराचार्य के मत से उपासना-मार्ग में सगुण साधना ही पहली सीढ़ी है। 'अद्वैत तत्त्व'-दुर्गम और दुःसाध्य है। जब तक देह का ज्ञान या 'अहङ्कार' रहेगा, तब तक 'अद्वैत तत्त्व'-एक महा-सत्य के रूप में ही प्राप्त हो सकता है, यथार्थ रूप से नहीं।

आदि-शङ्कराचार्य जी के अनुसार सर्व-प्रथम 'द्वैत-भाव' अर्थात् साधक और साध्य-इन दो रूपों में ही साधना प्रारम्भ होती है। दूसरे शब्दों में साधना के क्षेत्र में पहले 'द्वैत' अर्थात् 'मैं तुम्हारा हूँ' यह भावना जाग्रत होती है। फिर 'तुम मेरे हो'-यह भाव जाग्रत होता है और अन्त में 'अद्वैत भाव' अर्थात् 'तुम मैं हूँ' और 'मैं तुम हो' का भाव जाग्रत होता है।

'साधना' के सम्बन्ध में उक्त सिद्धान्त का प्रतिपादन 'मन्त्र'-साधना में भी हुआ है। मन्त्र-शास्त्र के अनुसार जगत् पञ्च-भूतात्मकों द्वारा गठित है और इन्हीं पञ्च-भूतात्मकों की प्रधानता के कारण मनुष्यों के लिए पाँच प्रकार की मन्त्र-साधनाएँ हैं। 'विष्णु'-'आकाश'-तत्त्व, 'शक्ति'-'अग्नि'-तत्त्व, 'शिव'-'पृथ्वी'-तत्त्व, 'सूर्य'-'वायु'-तत्त्व एवं 'गणेश'-'जल'-तत्त्व के स्वामी हैं तथा साधक को समय-समय पर अपने लक्ष्य के अनुसार अभीष्ट 'तत्त्वों' के अधिपति दैवतों की आराधना करनी चाहिए।

'शक्ति' अर्थात् 'अग्नि'-तत्त्व के आराधकों के लिए जहाँ 'शिव' अर्थात् 'पृथ्वी'-तत्त्व एवं 'गणेश' अर्थात् 'जल'-तत्त्व की आराधना करना सामान्य रूप से महत्त्व-पूर्ण ही नहीं अपितु आवश्यक होता है, वहीं विशेष अनुभूतियों हेतु 'विष्णु' अर्थात् 'आकाश'-तत्त्व एवं 'सूर्य' अर्थात् 'वायु'-तत्त्व की आराधना करना भी बहुत महत्त्व-पूर्ण होता है।

'शक्ति'-आराधना के सन्दर्भ में 'आकाश'-तत्त्व-रूपी 'विष्णु-आराधना' का कितना अधिक महत्त्व है, यह निम्न-लिखित तन्त्रोक्ति से सहज ही स्पष्ट होता है-

तारा देवी नील-रूपा, बगला कूर्म-मूर्तिका । धूमावती वाराह स्यात् , छिन्न-मस्ता नृसिंहिका।।
भुवनेश्वरी वामन स्यात्, मातङ्गी राम-मूर्तिका । त्रिपुरा जमदग्न्यः स्यात्, बलभद्रस्तु भैरवी ।।
महा-लक्ष्मी भवेत् बुद्धौ, दुर्गा स्यात् कल्कि-रूपिणी,
स्वयं भगवती काली, कृष्ण-मूर्ति-समुद्भवा।।

अर्थात् 'आकाश'-तत्त्व-रूपी भगवान् विष्णु के दश प्रधान अवतार 'अग्नि'-तत्त्व-रूपी दश महा-विद्याओं से उद्भूत हैं। दश महा-विद्याओं की आराधना करनेवालों को समय-समय पर दशावतारों की आराधना कर विशेष अनुभूतियाँ प्राप्त करनी चाहिए।

श्रीचण्डी-धाम, प्रयाग — ऋतशील शर्मा

सम्पादक की वाणी

'प्रयाग-राज' की 'अनुपम विभूति' श्री मञ्जुल जी नहीं रहे!

'प्रयाग-राज' की 'विभूतियों' के सम्बन्ध में जब कभी शोधात्मक रूप में लिखा जाएगा, तब यही अनुभव होगा कि 'श्री मञ्जुल जी' अर्थात् पं0 श्री गोविन्दशरण जी उपाध्याय इस तीर्थ-राज की विभूतियों में अपना कितना 'अनुपम स्थान' बनाए हुए थे। कहने को वे 'इलाहाबाद हाईकोर्ट' के 'एडवोकेट' थे, 'विश्व-विद्यालय' के प्रवक्ता थे और 'पेट्रोल पम्प', 'होटल' के स्वामी भी थे। इन विशेषताओं के साथ ही हिन्दी-जगत् के प्रख्यात 'प्रेमघन-परिवार' के प्रबुद्ध साहित्यकार एवं हाईकोर्ट के वरिष्ठ एडवोकेट पं0 श्री नर्मदेश्वर जी उपाध्याय के 'नाती' भी थे। साथ ही पटना (बिहार) के प्रसिद्ध डॉ0 एस0एन0 उपाध्याय के 'एकलौते सुपुत्र' भी थे और उनके बाबा बिहार के शिक्षा विभाग से सम्बद्ध थे। वे शिक्षा-विद् बाबा पटना-मेडिकल कालेज के पास निवास करनेवाली माईजी अर्थात् दरभङ्गा-नरेश महाराजाधिराज श्री रमेश्वरसिंह जी की सिद्ध रहस्य-मयी शिष्या के परम भक्त थे। उनके साथ डॉ0 उपाध्याय एवं शिष्य-रूप में श्री मञ्जुल जी भी स्नेह-मयी साक्षात् देवी-स्वरूपा माईजी के 'दर्शन' एवं 'आशीर्वाद' हेतु माईजी के साधना-पीठ में प्रायः पहुँचा करते थे।

'शैशवावस्था' में श्री मञ्जुल जी का स्वरूप कितना मोहक था, यह आज के उनके वृद्धावस्था के 'भव्य स्वरूप' का दर्शन करनेवाले भी तत्काल अनुभव कर लेते थे। स्नेह-मयी माईजी का उनके प्रति आकृष्ट होना सर्वथा स्वाभाविक था। वे उन्हें अपने गुरु महाराजाधिराज रमेश्वर सिंह का ही अवतार मानती थीं और सबसे कहा करती थीं कि ये महाराजा ही हैं। उनका कहना यथार्थ था। श्री मञ्जुल जी ने अपने लेखन एवं कार्यों के द्वारा इस तथ्य को प्रमाणित भी किया है। अखिल भारतीय शाक्त-सम्मेलन एवं बिहार शाक्त-सम्मेलन आदि का इतिहास जो लोग जानते हैं, वे भी माई जी के उक्त कथन की पुष्टि करते हैं। ऐसे अवतारी महा-पुरुष श्री मञ्जुल जी ठीक 'होली' के दिन दिवङ्गत हो गए, उन्हें कोटिशः श्रद्धाञ्जलि।

– रमादत्त शुक्ल, श्रीचण्डी-धाम, प्रयाग

श्रद्धेय श्रीपद्मजानन्दनाथ (श्री मञ्जुल जी) द्वारा प्रदत्त नित्य पठनीय

अनुग्रह-नवक

ॐ विश्वेश्वरी जगद्धात्री, स्थिति-संहार-कारिणी।
करोतु सा नः शुभ-हेतुरीश्वरी, शुभानि भद्राण्यभिहन्तु चापदः।१
ॐ स्तुताऽमरैः पूर्वमभीष्ट-संश्रयात् तया सुरेन्द्रेण दिनेषु सेविता! करोतु सा०।।२
ॐ या साम्प्रतं चौद्धत-दैत्य-तापितै-रस्माभिरीशा च सुरैर्नमस्यते। करोतु सा०।।३
ॐ या च स्मृता तत्क्षणमेव हन्ति नः, सर्वापदो भक्ति-विनम्र-मूर्तिभिः। करोतु सा०।।४
ॐ सर्वा बाधा-प्रशमनं, त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि! करोतु सा०।।५
ॐ सर्व-मङ्गल-माङ्गल्ये!, शिवे! सर्वार्थ-साधिके! करोतु सा०।।६
ॐ सृष्टि-स्थिति-विनाशानां, शक्ति-भूते! सनातनि! करोतु सा०।।७
ॐ शरणागत-दीनार्त्त-परित्राण-परायणे! करोतु सा०।।८
ॐ सर्व-स्वरूपे सर्वेशे!, सर्व-शक्ति-समन्विते। करोतु सा०।।९

विधि एवं माहात्म्य

उक्त 'अनुग्रह-नवक'-प्रयोग मिला-जुला स्तोत्र है। इसके द्वारा भगवती का अनुग्रह शीघ्र प्राप्त होता है। अपने 'इष्ट-रूप' में 'दश-महा-विद्याओं' में से किन्हीं एक का ध्यान कर उक्त स्तोत्र का प्रति-दिन 'नौ-पाठ' करने से 'इष्ट-रूप' में अपनी महा-विद्या का अनुग्रह पाठ-कर्त्ता को प्राप्त होता है।

प्रथम अखिल भारतीय शाक्त-सम्मेलन, पटना का उद्घाटन एवं सम्बोधन करते हुए श्री मञ्जुल जी

अखिल भारतीय शाक्त-सम्मेलन के उपाध्यक्ष पूज्य गुरुजी पं० गोविन्दशरण उपाध्याय जी के प्रति श्रद्धाञ्जलि!

सपनों में भी सोचा नहीं था! वज्रपात हो गया! श्यामा का पुत्र श्यामा में विलीन हो गया!... शब्द नहीं हृदय के पास, जो अपने भावों को लिपि-बद्ध करने में सहायक हों। श्रीगुरुदेव के आकस्मिक मणिपुर-वास से हम सभी मर्माहत हैं। विद्वान्, अधिवक्ता, सौम्य स्वभाव, मृदु-भाषी, ज्योतिष, सप्तशती एवं तन्त्रों का गहन अध्ययन उनकी विशेषताएँ थीं। एक ओर वे प्रचार से बचने के लिए अपने को गुप्त रखना चाहते थे, वहीं दूसरी ओर 'कापालिक उद्‌बोधनानन्दनाथ' के नाम से 'चण्डी'-पत्रिका के माध्यम से 'तन्त्र'-प्रेमी बन्धुओं को सदा दिशा-निर्देश दिया करते थे। दिशा-निर्देश की भाषा भी ऐसी कि लगे आमने-सामने बैठे हों। आपके द्वारा बताए गए मार्ग पर कुछ कदम आगे बढ़ सकूँ, यही उनके प्रति हम सबके लिए सच्ची श्रद्धाञ्जलि होगी। बिहार-शाक्त सम्मेलन द्वारा माई जी द्वारा स्थापित श्यामा मन्दिर के प्रांगण में श्री मञ्जुल जी को हार्दिक श्रद्धाञ्जलि दी गई।

—श्रीतारानन्दनाथ (कृष्णमुरारी तिवारी) एवं समस्त पदाधिकारी, बिहार शाक्त-सम्मेलन, पटना
दिल्ली, मुम्बई एवं छत्तीसगढ़ शाक्त-सम्मेलनों द्वारा श्री मञ्जुल जी को हार्दिक श्रद्धाञ्जलियाँ दी गईं।

६७ वर्षों से प्रकाशित आध्यात्मिक पुस्तक-माला

'कौल-कल्पतरु' चण्डी

पुष्प-२

कौल-कल्पतरु चण्डी

'नाम'-मन्त्र-साधना-सहित

मन्त्र-कल्पतरु

'कौल-कौस्तुभ' पं० कालीचरण जी पन्त

स्वामी श्रीशाश्वतानन्द जी सरस्वती

स्वामी श्री शिवानन्द जी

'कुल-भूषण' पं० रमादत्त शुक्ल

पं० श्रीकान्तविहारी मिश्र

महन्त श्रीकिशोरदास जी

परम पूज्य ॐ महाराज

डॉ. श्री वी०वी० गोरे

'कौल-कल्पतरु' पं० देवीदत्त जी शुक्ल

'श्रीविष्णु'-नाम-साधना एवं

'दशावतार'-नाम-मन्त्र-साधना

प्रकाशक :

परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान

श्रीचण्डी-धाम, अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग-२११००६

३५/-

मनन करने योग्य बातें

'मन्त्र-शास्त्र'–भुक्ति और मुक्ति अथवा भोग और मोक्ष–दोनों का साधन-शास्त्र है। इसी कारण कहा जाता है कि उसमें मन को अन्तर्मुख करने की विधि बताई गई है।

❀ ❀ ❀

मन्त्र-शास्त्र–'चित्त-शुद्धि' को अग्र स्थान देता है। 'मन्त्र-शास्त्र'–सदाचारियों के लिए है। सदाचारी मन्त्र-वेत्ता–अपना उत्कर्ष करता हुआ, जगत् का भी कल्याण कर सकता है।

❀ ❀ ❀

'मन्त्र-शास्त्र' के प्रत्येक बीज में एक विशेष अर्थ–विशेष रहस्य–भरा हुआ है। उस अर्थ या रहस्य की भावना करते हुए जब 'मन्त्र का जप' किया जाता है, तब साधक का 'मन'–उपास्य में एकाग्र हो जाता है और 'मन' के एकाग्र होने पर उसे 'अन्तर्मुख' करना सहज हो जाता है।

❀ ❀ ❀

'मन्त्र' का जप करते समय आधार-चक्र में, गुप्त स्थान के मध्य से तेज का प्रकाश बाहर फेंकते हुए–'इष्ट-वीज' को ऊपर उठता हुआ देखना चाहिए।

❀ ❀ ❀

सूचना

'कौल-कल्पतरु' चण्डी (आध्यात्मिक पुस्तक-माला)

१. 'चण्डी' वर्ष ६८, अङ्क ३ (तन्त्रोक्त साधना-क्रम) वी०पी०पी० ४०-०० रु० द्वारा सभी सदस्यों के पास जून, २००९ के अन्त में भेजा जाएगा। मई, २००९ में ४०.०० की वी०पी०पी० नहीं जाएगी।

२. मई, २००९ में 'चण्डी' आध्यात्मिक पुस्तक-माला के दो विशिष्ट अङ्क १. सांख्यायन तन्त्र (हिन्दी सारांश-सहित), २. श्री श्रीविद्या-सपर्या-वासना प्रकाशित होंगे। इन दोनों विशेष पुस्तकों का मूल्य १५०.०० रु० + रजिस्ट्री डाक-व्यय २०.०० = कुल १७०.०० रु० होगा। जो बन्धु दोनों विशेष पुस्तकों को रजिस्ट्री द्वारा मँगाना चाहते हों, वे मनिआर्डर द्वारा १७०.०० रु० निम्न-लिखित पते पर भेजकर दोनों विशेष पुस्तकें रजिस्ट्री द्वारा प्राप्त कर सकते हैं।

३. जो बन्धु वी०पी०पी० द्वारा उक्त दोनों विशेष पुस्तकें मूल्य १५०.०० रु० + वी०पी०पी० डाक-व्यय ३०.०० = कुल १८०.०० रु० द्वारा मँगाना चाहते हों, वे निम्न-लिखित पते पर सम्पर्क कर वी०पी०पी० द्वारा दोनों विशेष पुस्तकें मँगा सकते हैं–

श्रीचण्डी-धाम, अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग-२११००६

दूरभाष : ०५३२-२५०२७८३, ०९४५०२२२७६७, ०९२३५९१००७१

मन्त्र-कल्पतरु

मन्त्र-जप विधि

कौल-कौस्तुभ
पं० कालीचरण जी पन्त

ध्वनि-तरङ्गों का रहस्य

स्वामी श्री शाश्वतानन्द जी सरस्वती

मन्त्र-शास्त्र का वर्णन

स्वामी
श्रीशिवानन्द जी

मन्त्र-सिद्धि के लक्षण

कुल-भूषण
पं० रमादत्त शुक्ल

मन्त्र-जप-विधि

- सद्-गुरु कृपा-पूर्वक **शब्द-ब्रह्म**-रूप **'मन्त्र'** का उपदेश देते हैं। **'मन्त्र'** ही **मन-रूपी** मत्त गज-राज को वश में करने का **सार्थक अंकुश-शास्त्र** है।
- १. शब्द, २. अक्षर, ३. स्पन्दन और ४. अनुच्चार्या मात्रा–ये मन्त्र की क्रमशः चार अवस्थाएँ हैं।
- श्रीसद्-गुरु द्वारा प्राप्त **वैखरी शब्द** को अन्तिम **परावस्था** में प्राप्त कराना ही **'साधन-पथ'** है। यह श्रीसद्-गुरु द्वारा उपदिष्ट मार्ग पर **'मन्त्र-जप'** से ही होता है।
- 'मन्त्र-जप' ही **सर्व-सुगम साधना और सिद्धि का मूल** है। 'यामल'-वचन है–'जिस प्रकार **अन्धकार से व्याप्त घर में दीपक के द्वारा घर दिखाई देता है। उसी प्रकार 'मन्त्र' के द्वारा आत्मा का दर्शन होता है।'**
- 'मन्त्र' की **सर्वोत्तम 'जप'-विधि** के लिए **कबीर साहब** कहते हैं–**'साँसौ साँसा नाम जपु अरु उपाय कछु नाहिं।'** इस वचन में **साँस पर साँस का रहस्य** यह है कि विकल अवस्था में **'मन्त्र'**-जप न किया जाए। जब तक श्वास दृढ़ होकर स्थिर न हो जाए, तब तक एक-एक साँस के साथ जप करे। यह अवस्था तभी आ सकती है, जब मन में **धैर्य** और आनन्द हो। इसके लिए 'आगम'-वचन है–'**श्वास के मार्ग में मन को लगावें।**'
- श्वास-मार्ग में मन को लगाने से, **प्राण की गति** यथा-समय स्थिर होने लगती है और श्वास-मार्ग में नियोजित **'मन'**, सहज ही में **'प्राण' की गति** स्थिर कर **'प्राण'** को **'नासाभ्यन्तर-चारी'** बना देता है। इस अवस्था में **'प्राण'** के वृथा व्यय न होने से शरीर में **ओज-बल की वृद्धि** होती है और **आनन्द की मात्रा** में भी वृद्धि होती है। इस प्रकार रुके हुए **'प्राण'** को जहाँ पर भी स्थिर किया जाता है, वहीं पर **'स्फुरणा'** उत्पन्न हो जाती है। यह **'स्फुरणा'** ही देहस्थ **षट्-चक्रों** में धारा-प्रवाह-रूप से **'वैखरी-मन्त्र-जप'** को **अर्न्तमुखी** करती है और **'मध्यमा'** का उदय होता है। **'प्राण'** और **'मन'** परस्पर सम्बद्ध हैं। एक के स्थिर होते ही दूसरा स्थिर हो जाता है।
- **'प्राण'** और **'अपान'** के योग को **'वायवी-शक्ति'** कहते हैं। इसका स्थान **'मूलाधार'** है। **'योगिनी'** और **'खेचरी'** नामक **श्वासोच्छ्वास** वायु-रूप में **'मूलाधार-पद्म'** पर **बारह अंगुल ऊँचे स्थित हैं।** **श्वास-द्वारा 'प्राण'** के विचलित होने से **'चित्त'** विकल रहता है। अतः **'चित्त'** को स्थिर करने के लिए **'प्राण' की गति रुद्ध करके 'मन्त्र-जप'** करना चाहिए। इसके लिए अभ्यास जरूरी है। **'प्राण'** ही **विषय, वृत्ति** आदि सबका मुख्य आहार है। इसी को खा-पी कर सब शत्रु शरीर में नित्य स्थिर रहते हैं। अगर इनका खाना बन्द हो जाए–तो ये स्वयं भाग जाएँ और **अन्तःशक्ति** अर्थात् **'कुण्डलिनी'**-चैतन्य हो जाए।
- **'मन्त्र'**-रूप **'शब्द-ब्रह्म'–अन्तर्मुखी** होने पर **स्पन्दन** आदि रूप में प्रतीत होता है।
- 'पूरक-योग' से 'पीत्वा पीत्वा पुनः पीत्वा'–अर्थात् **प्राण का सञ्चय और कुम्भक से स्थिरता की प्राप्ति तथा अन्तर-रेचक से सुषुम्णा में प्रवेश**–यही **'शक्ति'** को चैतन्य करने का उपाय है।

पूरक द्वारा शरीर में 'प्राण' का सञ्चय और कुम्भकावस्था में अपान के सङ्घर्ष से अग्नि प्रदीप्त हो उठती है। इसी अग्नि से 'मन्त्र-शक्ति' जागृत होती है। कबीर साहब कहते हैं–

समुद्र लागी आगि नदियाँ जलि कोयला भईं। उठ कबीरा जाग मच्छी विरछा चढ़ गईं।

अर्थात् प्राण-अपान के सङ्घर्ष में प्रदीप्त अग्नि द्वारा आत्म-शक्ति चैतन्य हुई और इडा-पिङ्गला आदि को प्राण-रूपी आहार न मिला। इससे विषय, वृत्तियाँ आदि जल गईं और आत्म-शक्ति-कुल-वृक्ष सुषुम्णा-पथ से मेरु-दण्ड के शिखर 'सहस्रार' पर चढ़ गईं।

✦ 'मन्त्र-जप' के विषय में 'योग-तारावली' ग्रन्थ में भगवान् शङ्कराचार्य ने कहा है–

सदा-शिवोक्तानि स-पाद-लक्ष-लयावधानानि वसन्ति लोके।
नादानुसन्धान-समाधिमेकं, मन्यावहे मान्य-तमं लयानाम् ।।
नादानुसन्धान ! नमोऽस्तु तुभ्यं, त्वां मन्महे तत्त्व-पदं लयानाम् ।
भवत्-प्रसादात् पवनेन साकं, विलीयते विष्णु-पदे मनो मे ।।
सर्व-चिन्तां परित्यज्य, सावधानेन चेतसा।
नाद एवानुसन्धेयो, योग-साम्राज्यमिच्छता ।।

अर्थात् 'योग-शास्त्र' के प्रवर्तक भगवान् शिव जी ने मन के लय होने के सवा लक्ष साधन बतलाए हैं। उन सबमें 'मन्त्र-जप' अर्थात् 'नादानुसन्धान' सबसे सुलभ और श्रेष्ठ है। हे नादानुसन्धान! आपको नमस्कार है, आप परम-पद में स्थित कराते हैं। आपके ही प्रसाद से प्राण-वायु और मन–ये दोनों विष्णु के परम-पद में लय हो जाएँगे। योग-साम्राज्य में स्थित होने की इच्छा हो, तो सब चिन्ताओं को त्याग कर सावधान होकर एकाग्र-मन से अनाहत-नादों को सुनो।

✦ प्रत्येक मनुष्य की देह में लगभग साढ़े तीन कोटि रोम हैं। 'वायु'-प्रकृतिवाला साधक जब साढ़े तीन कोटि मन्त्र-जप कर लेता है, तब उसे 'अनाहत नाद' की अनुभूति होती है, किन्तु 'पित्त'-प्रकृतिवालों की नाड़ियाँ शुद्ध होती हैं। अतः उन्हें केवल सवा कोटि मन्त्र-जप करने ही से 'अनाहत नाद' का ज्ञान हो जाता है।

मनन करने योग्य बातें

योग-युक्त अन्तः-करण में व्यवस्थित रूप से 'मन्त्र-जप' होने से 'मन्त्र-शक्ति' प्रगट होकर कार्य करने लगती है।

❀ ❀ ❀

वेदोक्त और तन्त्रोक्त अलौकिक मन्त्रों को सिद्ध करने में अधिक प्रयत्न करने की आवश्यकता नहीं होती क्योंकि वे स्वतः-सिद्ध अनादि मन्त्र हैं।

❀ ❀ ❀

साधक यदि शक्ति-शाली हो और उसका अन्तः-करण-योग-युक्त हो, तो वह चतुर्दश भुवनों के सब स्थानों और पिण्डों में-'मन्त्र-बल' से बलवान् होकर कार्य कर सकता है।

❀ ❀ ❀

अपरिर्वतन-शील 'ध्वनि-तरङ्गों' का रहस्य

- इटली की विश्व-विख्यात गायिका द्वारा 'वीणा' पर ऋग्-वेद की ऋचा का गायन करते हुए, रेत पर 'हंस-वाहिनी' का चित्र 'ध्वनि-तरङ्गों' से ही उत्पन्न कर देना एक बहुत पुरानी घटना हो चुकी है।
- चित्र-पट के पर्दे की तरह, केवल एक वस्त्र के परदे पर, तीव्र विद्युत-प्रकाश में 'भैरव-राग' की विकराल मूर्ति अङ्कित कर देनेवाला **स्पेनिश गायक** विश्व-विख्यात हो चुका है।
- 'ध्वनि-तरङ्गों' से वनस्पति को अधिक पल्लवित और पुष्पित करने के प्रयोग भी यथेष्ट हो चुके हैं और इन सब बातों से **ध्वनि की प्रबल 'सृजक एवं पालक-शक्ति'** का अनुमान सरलता से ही लगाया जा सकता है। इसी प्रकार 'ध्वनि' की जो **विकट 'संहारक शक्ति'** है, उसके सम्बन्ध में **आधुनिक विज्ञान** में इतना मतैक्य है कि उसे सिद्ध करने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता।

सृजक, पालक एवं सहायक ध्वनि-तरङ्गों की विशेषता

- **सृजक, पालक एवं संहारक-'ध्वनि-तरङ्गों'** की एक सबसे बड़ी विशेषता जो है, वह है इनका **'अविनाशत्व'**। 'ध्वनि'-कभी नष्ट नहीं होती। इसी आधार पर पचासों वर्ष पूर्व के गाए हुए किसी गायन या किसी वार्त्तालाप को आप रेकार्ड आदि द्वारा आज भी उसी प्रकार सुनने में समर्थ होते हैं।
- नाश का अभाव ही उत्पत्ति का अभाव है। जो उत्पन्न होता है, उसका नाश अवश्यम्भावी है और जिसका नाश होता है, उसकी पुनरुत्पत्ति भी अनिवार्य है। वस्तुतः 'नाश' एक परिर्वतन मात्र है। **'नासतो विद्यते भावो, नाभावो विद्यते सतः'** का सिद्धान्त **आधुनिक भौतिक विज्ञान** द्वारा सत्य सिद्ध हो चुका है। जो अवस्था **'नाश'** के नाम से अभिव्यक्त होती है, वह केवल **रूप** का **'परिवर्तन'** मात्र है। अतः **अपरिवर्तन-शीलत्व** को दूसरे शब्दों में **जन्म-मरण-राहित्य** कहा जा सकता है। जो **जन्म-मरण-रहित** है, वह **अनादि** एवं **अनन्त** है। यह सब केवल शब्दों का अन्तर है। इस प्रकार **'ध्वनि'-अनादि** एवं **अनन्त** है।
- सत्य की परिभाषा यही है कि-**'जो त्रि-काल में एक सा हो'** अर्थात् **अपरिवर्तन-शील पदार्थ**-सत्य होता है। 'ध्वनि'-**त्रि-काल में अपरिवर्तन-शील है**। अतः **'ध्वनि'** ही **सत्य है**, यह स्पष्ट रूप से प्रतिपादित है।
- **'ध्वनि'-सृजक है, 'ध्वनि'-पालक है और 'ध्वनि'-संहारक है। 'ध्वनि'-सर्व-शक्ति-मान् है, 'ध्वनि'-अनादि है, अनन्त है एवं 'ध्वनि'-सत्य-स्वरूप है।**
- विश्व के सम्पूर्ण **ईश्वर-वादी धर्म, सम्प्रदाय** एवं **दर्शनों** में **'ईश्वर'**-शब्द की परिभाषा मात्र यही है कि वह **सृजक है, पालक है, संहारक है, अनादि-अनन्त है, सत्य-स्वरूप** है एवं **सर्व-व्यापी** है। **'ध्वनि'** के **सर्व-व्यापकत्व** के विषय में आज के युग में जब आप **आकाश-वाणी** एवं **बेतार के तार** का उपयोग कर रहे हैं, कुछ भी कहना व्यर्थ है। इस प्रकार स्पष्ट सिद्ध है कि विश्व का आस्तिक समाज जिस **परमात्मा** के गुण-गान करता नहीं थकता, वह **'ध्वनि'** को छोड़कर और कुछ नहीं है।

- दूर से आती हुई अनेक प्रकार की सम्मिलित 'ध्वनि' केवल एक ही रूप में श्रुति-गोचर होती है। वह रूप है उसका- 'ओङ्..... 'ओङ्..... 'ओङ्..... 'ओङ्..... ।' किसी मेले-ठेले में, किसी समूह में उससे अलग होकर दूर जाकर सुनिए, केवल यही ध्वनि श्रुति-गत होगी। जङ्गल में चले जाइए, कान लगाकर सुनिए- '**ओम्..... ओम्..... ओम्.....** ही सुनाई देगा। प्रपात को दूर से सुनिए। निशीथ के एकान्त प्रहर में झींगुरों की कर्ण-कटु चीख को भेदकर कान लगाइए, केवल- **ओम्..... ओम्..... ओम्** का ही नाद कर्ण-गोचर होगा। सभी प्रकार की ध्वनियों का सम्मिलित स्वर है- **ओम्..... ओम्..... ओम्।'** इस सम्पूर्ण विनाश-शील अर्थात् परिवर्तन-शील विश्व में '**ध्वनि**' ही **अविनाशी** अथवा **अपरिवर्तन-शील** है।
- विश्व की जब उत्पत्ति हुई है, तो विनाश तो अमिट सत्य है ही एवं विनाश के उपरान्त उत्पत्ति-यही तो **विश्व-क्रम** है। **उत्पत्ति** एवं **विनाश** के मध्य-काल में हम निवास करते हैं, किन्तु **विनाश** एवं **उत्पत्ति** के मध्य में क्या था, इस प्रश्न का एक ही उत्तर सम्भव है-**वह पदार्थ जो त्रि-काल में अपरिवर्तन-शील, अविनाशी है और वह है '**ध्वनि**'** अर्थात् प्रलय के उपरान्त मात्र '**ध्वनि**' शेष थी। उस '**ध्वनि**' का उस समय श्रुति-गोचर रूप क्या था? जो **पूर्व विश्व की सम्पूर्ण सम्मिलित ध्वनियों का रूप** सम्भव हो, वही तो? और सम्मिलित ध्वनि का मात्र एक रूप है- **ओम्..... ओम्..... ओम्।'**
- सारांश यह है कि **प्रलय** के उपरान्त केवल एक '**ध्वनि**' व्याप्त थी-'**ओम्**'। इसीलिए **भारतीय दार्शनिकों** ने **प्रलय** के उपरान्त स्थित रहनेवाले तत्त्व को '**ओम्**' के नाम से पुकारा। यह '**ओम्**' ही **सम्पूर्ण ध्वनि का मूल रूप है-सम्मिलित रूप है।**
- सभी प्रकार की ध्वनियाँ पानी नहीं बरसा सकतीं। सभी प्रकार की ध्वनियाँ पौधों को बढ़वार नहीं दे सकतीं। कुछ **विशिष्ट ध्वनियाँ** ही **विशिष्ट कार्य-सम्पादन** में समर्थ होती हैं। इसी प्रकार **ध्वनियों का सम्मिलित रूप** किसी भी **सृजन**, **पालन** किंवा **संहार**-कार्य में समर्थ नहीं होता क्योंकि परस्पर-विरोधी तत्त्वों के सम्मिश्रण से मिश्रित तत्त्व स्वभावतः क्रिया-हीन हो जाता है। **सम्मिलित ध्वनि-मण्डल** से किसी भी कार्य के सम्पादन के निमित्त आवश्यक है कि उस सम्मिश्रण का पृथक्-करण हो।

मानवीय सृष्टि से सम्बद्ध 'ध्वनि-तरङ्गों' का अन्वेषण

- सम्पूर्ण विश्व के समग्र कार्य-कलापों को तीन भागों में ही विभक्त किया जा सकता है-**१. सृजन, २. पालन** और **३. संहार**। अतः '**ध्वनि**' **के तीनों रूपों** को अलग-अलग पहचानने का प्रयास हुआ और उसे अलग-अलग रूपों में पहचाना गया।
- **सृष्टि के आदि में '**ध्वनि**'** अपने मूल रूप से क्रमशः **तीन रूपों** में विभक्त हुई। इस विभक्तीकरण की विशद व्याख्या से ही हिन्दू-शास्त्र-पुराणादि भरे पड़े हैं। '**सप्तशती**' के '**प्राधानिक रहस्य**' में वह

क्रम समझाया गया है, जिस क्रम से '**ध्वनि**' की सृष्टि के आदि-रूप से **तीन रूपों** एवं उनसे पुनः **छः रूपों** का पृथक्-करण हुआ, किन्तु इतना जान लेने भर से **भारतीय महा-वैज्ञानिकों** को सन्तोष नहीं हुआ। उन्होंने अपना अन्वेषण चलाए रक्खा। उन्होंने देखा कि विश्व में-ब्रह्माण्ड में-**पाँच तत्त्व** ही अपने **सूक्ष्म, सूक्ष्म-तर** एवं **सूक्ष्म-तम** रूप में क्रिया-शील हैं। इन तत्त्व-विशेषों को उन्होंने क्रमशः **१. क्षिति, २. जल, ३. पावक, ४. समीर** एवं **५. गगन** नाम दिया (ध्यान रहे, स्थूल विश्व में दृष्टि-गत **भू-जल-अनल-अनिल-व्योम** उक्त तत्त्वों के **परिणाम हैं, तत्त्व नहीं**)। उन अन्वेषकों ने '**ध्वनि-तरङ्गों**' का इन तत्त्व-विशेषों से सम्बन्ध देखा। वस्तुतः '**ध्वनि-तरङ्गें**' ही **पञ्च सूक्ष्म-तम तत्त्वों की जननी हैं**। अतः उन्होंने प्रत्येक तत्त्व (**सूक्ष्म-तम**) की उत्पादक भिन्न-भिन्न '**ध्वनि-तरङ्गों**' का **अन्वेषण** प्रारम्भ किया और उन्हें खोज निकाला।

✦ **आदि-ध्वनि**-'**ओम्**' अनेक ध्वनियों से एक बनी थी क्योंकि '**ओम्**'-**सम्पूर्ण** '**ध्वनि**' **का सम्मिलित रूप ही है। सृष्टि के आदि में वही** '**एक**' पुनः '**अनेक**' रूपों में परिवर्तित हुई। '**ध्वनि**' के इन अनेक रूपों का गहन अध्ययन कर **भारतीय महा-वैज्ञानिकों** ने पाया कि इन असंख्य रूपों में केवल थोड़े रूप ही **मानवीय सृष्टि** से सम्बन्ध रखनेवाले हैं। शेष अनन्त **ब्रह्माण्ड** के क्रिया-कलापों से **सम्बद्ध हैं**। सर्व-प्रथम उन्होंने **मानवीय सृष्टि, पालन, संहार** से सम्बद्ध '**ध्वनि**' के रूपों की गणना की। वे '**तैंतीस करोड़**' थे, किन्तु यह विस्तृत संख्या मनुष्य की धारणा-शक्ति में समाने योग्य नहीं थी। अतः इन **तैंतीस करोड़ रूपों** के मूल रूप खोजने में वे तन्मय हुए। उन्होंने '**इक्यावन**' ऐसे **ध्वनि-रूपों** को खोज निकाला, जिनके सम्मिश्रित प्रयोग से इन **तैंतीस करोड़ रूपों** में से **यथेच्छ ध्वनि-रूप** उत्पन्न किया जा सके।

✦ ध्वनि के '**इक्यावन**' रूपों में प्रारम्भ में अन्वेषित कुल '**पच्चीस**' **ध्वनि-रूप** हैं। इन '**ध्वनि-रूपों**' को **भारतीय महा-वैज्ञानिकों** ने '**व्यञ्जन**' नाम दिया, किन्तु मानवीय किंवा अमानवीय प्रयत्नों से ये '**ध्वनि-रूप**' प्रकट नहीं किए जा सकते। अतः इन्हें प्रगट करनेवाली शक्ति की खोज हुई। इन मूल '**ध्वनि-रूपों**' का प्रगटीकरण करनेवाली '**सोलह शक्तियाँ**' उन्होंने ढूढँ निकालीं। ये '**सोलह**' **शक्तियाँ**-'**स्वर**' के नाम से अभिव्यक्त की गईं। इसी अन्वेषण में इन **स्वर-शक्तियों** अर्थात् **व्यक्त-कारक शक्तियों** की छान-बीन में '**दस**' अत्यन्त महत्त्व-पूर्ण '**स्वर**' या '**ध्वनि-रूप**' उन्हें प्राप्त हुए, अन्त में प्राप्त इन '**ध्वनि-रूपों**' को '**अन्तःस्थ**' नाम दिया गया। इस प्रकार इनकी परिपूर्ण संख्या '**इक्यावन**' हो गई।

✦ '**इक्यावन ध्वनि-रूपों**' के **पञ्च-महा-तत्त्वों** पर प्रभाव का अध्ययन करते हुए **भारतीय महा-वैज्ञानिकों** ने कुछ परिणाम निकाले। उन्होंने देखा कि प्रत्येक **व्यक्त-कारक शक्ति**-'**व्यञ्जन-ध्वनि**' किंवा '**अन्तःस्थ-ध्वनि**' एक विशिष्ट **महा-भूत** (**महा-तत्त्व**) में एक विशेष प्रकार का कम्पन करती है। अतः उन्होंने निम्न प्रकार से इनका विभागीकरण किया-

५१ 'ध्वनि-तरङ्गों' का विभागीकरण

१. स्वर-शक्तियाँ, २. व्यञ्जन-ध्वनि, ३. अन्तःस्थ ध्वनि-पाँचों महा-भूतों पर निम्न प्रकार से कार्य करती हैं :

स्वर	व्यञ्जन	अन्तःस्थ	महा-भूत
१. अ, आ	क, च, ट, त, प	य, स	वायु
२. इ, ई, ऋ, ॠ	ख, छ, ठ, थ, फ	र, श	अग्नि
३. उ, ऊ, लृ , ॡ	ग, ज, ड, द, ब	ल, ळ	पृथ्वी
४. ए, ऐ	घ, झ, ढ, ध, भ	व, श	जल
५. ओ, औ, अं, अः	ङ, ञ, ण, न, म	ह, क्ष	आकाश

✧ उक्त '**इक्यावन**' ध्वनि-तरङ्गों **का अन्वेषण** कर भारतीय महा-वैज्ञानिकों ने इन्हीं ५१ रूपों के विभिन्न **समासम-मिश्रणों** के द्वारा '**पञ्च-मूल-तत्त्वों**' में कम्पन उत्पन्न करनेवाली मानव-सृष्टि से सम्बद्ध '**मन्त्र**'-**स्वरूपा** '**तैंतीस करोड़**' **ध्वनि-शक्तियों का प्रत्यक्षीकरण** ही नहीं किया, वरन् मानव मात्र को **अनन्त ब्रह्माण्डों के सृजन, पालन एवं संहार करनेवाली महा-शक्तियों** को प्रत्यक्ष साक्षात्कार करने हेतु सक्षम भी बनाया।

वैखरी, मध्यमा, पश्यन्ती, परा ध्वनियों का रहस्य

✧ **आधुनिक पदार्थ-विज्ञान** ने आज '**ध्वनि**' के जिन रूपों को प्रत्यक्ष करने के प्रयास में सफलता प्राप्त की है, वे '**ध्वनि**' के **स्थूल-तम रूप** हैं। उनके द्वारा प्राप्त सफलता भी अत्यन्त ही **स्थूल क्रिया-कलाप** हैं। अपनी स्थूलता के कारण यह सफलता सर्वदा निश्चित न रहकर, सन्दिग्ध ही रहती है। फिर किसी कार्य-विशेष के निमित्त '**ध्वनि-तरङ्गों**' के उत्पादन की उनकी विधि भी इतनी जटिल, अगम्य और अव्यावहारिक है कि उपकरणों के अभाव में प्रत्येक क्षेत्र एवं अवस्था में उसका प्रयोग ही नहीं किया जा सकता। इसके विपरीत **भारतीय तत्त्व-वेत्ता महा-वैज्ञानिकों** ने '**ध्वनि-तरङ्गों**' के उत्पादन एवं उन्हें किसी **सृजन, पालन** किंवा **संहार** के कार्य के निमित्त प्रेरित करने की इतनी सरल, सुबोध एवं व्यावहारिक विधियों का आविष्कार किया है कि केवल '**श्रद्धा**' और '**विश्वास**' का सम्बल ग्रहण कर निर्बल-से-निर्बल व्यक्ति भी अपने लक्ष्य को सरलता से प्राप्त कर सकता है।

✧ हमारी **कर्ण-गोचर** '**ध्वनि**'-**स्थूल-तम** '**ध्वनि-तरङ्गों**' **का परिणाम** है। हमारे कान जिन '**ध्वनि-तरङ्गों**' को ग्रहण कर सकते हैं, वे इतनी स्थूल हैं कि उनमें **सृजक, पालक** एवं **संहारक शक्ति** अत्यन्त ही हीन अवस्था में है। इसी **कर्ण-ग्राह्य स्थूल-तम** '**ध्वनि**' को भारतीय महा-वैज्ञानिकों ने '**वैखरी**' नाम प्रदान किया है। इन '**ध्वनि-तरङ्गों**' से सहस्र गुणा अधिक सूक्ष्म जो '**ध्वनि-तरङ्गें**' हैं, उन्हें उन्होंने '**मध्यमा**' नाम दिया है। '**मध्यमा**' की लहरें आधुनिक भाषा में कथित '**ईथर**'-तत्त्व में रहती हैं।

✦ भारतीय महा-वैज्ञानिक इससे भी आगे बढ़े। उन्होंने देखा–इन **'मध्यमा' 'ध्वनि-तरङ्गों'** से लक्ष-गुणा अधिक **'ध्वनि-तरङ्गें'–सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का सञ्चालन** करती हैं। इन **'तरङ्गों'** को उन्होंने **'पश्यन्ती'** नाम दिया। लगन-शील अन्वेषक अपने अन्वेषण को करते हुए आगे बढ़े एवं **'ध्वनि'** के उस परम सूक्ष्म मूल रूप को उन्होंने दृष्टि-गत किया, जो **'पश्यन्ती'** से अनन्त गुणा सूक्ष्म था एवं जिसके परे फिर कुछ नहीं था। **'ध्वनि'** के इस **आदि कारण-रूप** को उन्होंने **'परा'** नाम दिया।

✦ **'परा'**-ध्वनि ही **सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में कल्पनातीत सूक्ष्मता में व्याप्त है और सम्पूर्ण अनन्त ब्रह्माण्डों की सृजक, पालक एवं संहारक शक्तियों की आदि-स्त्रोत है। सम्पूर्ण विश्व की सञ्चालिका शक्ति** होने के नाते यह हमारे अपने शरीरों में भी उसी प्रकार विद्यमान है। थोड़ी तन्मयता, थोड़े अभ्यास एवं अटल निष्ठा के बल से हम उसे प्रत्यक्ष ही नहीं कर सकते, वरन तद्-रूप होकर **चिदानन्द** का उपभोग कर सकते हैं।

कुण्डलिनी-योग अर्थात् 'परा'-ध्वनि की अनूभूति

✦ **'परा'-वाणी** की अनुभूति से सम्बन्धित साधना–**'कुण्डलिनी-योग'** के नाम से पुकारी जाती है। वस्तुतः **कुण्डलिनी-जागरण** से ही विश्व के विभिन्न धर्मों में कथित लक्ष्य की प्राप्ति होती है। **'गीता'** का **स्थित-प्रज्ञ, 'बौद्ध-धर्म'** का **सम्बुद्ध** या **जीवन-मुक्त, 'पुराणों'** का **परम-हंस, 'मुस्लिम-धर्म'** का **औलिया**, या **'ईसाई-धर्म'** का **लिविङ्ग, ख्रीष्ट**–कोई भी इस **महा-शक्ति के जागरण** के बिना नहीं बन सकता। ये सब अवस्थाएँ मात्र **'कुण्डलिनी-जागरण'** की अवस्था के ही भिन्न पर्याय मात्र हैं। **'परा'** महा-शक्ति से सम्बद्ध होकर प्राणी वस्तुतः कृत-कृत्य हो जाता है।

✦ **अव्यक्त 'परा-ध्वनि'**-स्वरूपा **महा-शक्ति** का **उद्‌बोधन साधन-क्रम** की विभिन्नता से मुख्यतः दस रूपों में होता है। ये ही **दश-रूप–'शाक्त-धर्म'** में **'दश महा-विद्याओं'** के नाम से अभिव्यक्त हैं। ये **'दश महा-विद्याएँ'** उसी **अव्यक्त** परमात्म परम सूक्ष्म **'ध्वनि-रूपा परा-कुण्डलिनी'** के ही विशेष-रूप हैं।

✦ **अव्यक्त 'परा-ध्वनि'** से सम्बद्ध होना तो चरम लक्ष्य है ही, किन्तु **'पश्यन्ती'** एवं **'मध्यमा'** ही नहीं, **'वैखरी'** में भी अनेक ऐसी **'ध्वनि-तरङ्गों'** का आविष्कार **भारतीय ऋषि** कर गए हैं, जिनका सम्यक् विधि-विधान से प्रयोग करने पर मनुष्य अत्यल्प-काल में **अति-मानवीय शक्ति** से सम्पन्न होकर **आत्म-कल्याण** एवं **लोक-कल्याण** कर सकता है। **श्री दुर्गा-सप्तशती, रुद्राष्टाध्यायी, पुरुष-सूक्त, देवी-सूक्त** एवं विभिन्न **वैदिक सूक्त** इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं, जो आज भी **'वैखरी-ध्वनि'** में ही अपनी विशिष्ट विधियों के साथ उच्चारित होकर **अति-मानवीय कार्य** सम्पादन करते रहते हैं।

'मन्त्र-शास्त्र' का वर्णन

✦ **'मन्त्र-शास्त्र'–समस्त शास्त्रों का सार है।** मन्त्र-शास्त्र के अनुसार **'शक्ति'** के दो रूप हैं– **१. निराकार, २. साकार।** निराकार-रूप में **'शक्ति'–चित्-स्वामिनी** कही जाती है, जो चराचर में व्याप्त है। **देव, दानव, मानव** आदि सब उस **'शक्ति'** की ही कृतियाँ हैं। उसका पूर्ण स्वरूप **कोटि-कोटि सूर्य, चन्द्र** के तेज के समान ज्योतिर्मय एक **'विन्दु'** है। **'शक्ति'** का तेज–**'आत्मा'** के रूप में मानव शरीर में विद्यमान है। वास्तव में **'आत्मा'–'परमात्मा की चैतन्य शक्ति'** का सूक्ष्म निराकार रूप है, जिसे **वेदान्ती** प्रथमावस्था में **'द्रष्टा'** कहते हैं। **'निराकार'** अपनी स्वतन्त्रता के आनन्द में मग्न होकर स्वेच्छा से अपने को उत्तरोत्तर विकसित करता हुआ, **निज विलासानन्द की अनुभूति** के लिए सर्वथा **'कर्तुमकर्तुमन्यथा कर्तुम् समर्थः'** होने के कारण स्वयं ही **'साकार-स्वरूप'** धारण कर लेता है। यथार्थ में **'साकार'** एवं **'निराकार'**–सर्व-समर्थ परमात्मा की चैतन्य शक्ति का विलास-मात्र ही है।

✦ **'निराकार'** को **'सूक्ष्म'** एवं **'साकार'** को स्थूल, **'निराकार'** को **'बिन्दु'** तथा **'साकार'** को **'विमर्श'** **'निराकार'** को **नित्य** और **'साकार'** को **अनित्य** आदि विशेषण **'शब्द-ब्रह्म-शक्ति'** का प्रतिपादन करते हैं, परन्तु जब कोई साधक **'परा-वाणी'** में प्रवेश कर देखता है, तो अपने को **अवाच्य, अचिन्त्य, अवाङ्-मनस् -गोचर** कह कर मौन हो जाता है। तब वह **शक्ति** मन्द मुसकराती हुई अपना कुछ-कुछ परिचय **'शब्द-ब्रह्म'** को देती है, जिसके एक विन्दु के केवल आभास-मात्र से **'शब्द-ब्रह्म'** अनन्त-अनन्त कहकर नाचता हुआ **महा-भाव** को प्राप्त होकर निस्तब्ध हो जाता है

✦ **मूल तत्त्व**–अजा **'आद्या-शक्ति'** है। वह **अनन्त** और **अव्यक्त** है। **'शाक्तागम'** से लेकर **'वैष्णवागम'** एवं **'वैखानस आगम'** तक सम्पूर्ण **आगम**-साहित्य में उसी **अव्यक्त** को प्रकट करने की चेष्टा की गई है। **'आगम'** का विशेष महत्त्व इसी में है। उस **अज्ञेय** एवं **अव्यक्त 'शक्ति'** के प्रत्येक विकास में एक ही **परम तत्त्व** का स्वतः **आगम** होता रहता है। इसी हेतु इसे **'आगम'** भी कहते हैं। इस **परम-तत्त्व** को **'शिव-ईश्वर'** कहते हैं।

✦ उदाहरण-रूप में आदि-लीला में **ब्रह्मा जी**, तप के प्रभाव से जैसी सृष्टि चाहते थे, वैसी कर लेते थे, परन्तु उसकी अभिवृद्धि नहीं होती थी। अतः **'शक्ति'** ने **विमर्श** एवं **स्फूर्ति** का रूप धारण किया तथा **शिव** ने **प्रकाश**-रूप में उसमें प्रवेश किया। परिणाम-स्वरूप **'विन्दु'** का प्रादुर्भाव हुआ। इसी प्रकार **'स्त्री-शक्ति'** ने **'पुरुष-शिव'** में प्रवेश किया, जिससे वह **'विन्दु'** समुन्नत हुआ तथा इस संयोग से **'नाद'**-तत्त्व की उत्पत्ति हुई। ये दोनों **'नाद'** एवं **'विन्दु'**–दूध और पानी के समान ऐसे मिले कि एक रूप हो गए तथा **'संयुक्त विन्दु'–'अर्द्ध-नारीश्वर'** नाम से प्रसिद्ध हुआ। यह तत्त्व **पुरुषत्व** एवं **स्त्रीत्व**–उभय के बीच अत्यन्त आसक्ति को प्रकट करता है। इसी अभिप्राय से इसे **'काम'** कहते हैं।

पुनः दो **'विन्दु'** जिनमें से एक **'श्वेत'**-वर्ण का है, जो **पुरुषत्व** का बोधक है और दूसरा **'रक्त'**-वर्ण का है, जो **स्त्रीत्व** का परिचायक है। इन दोनों से **'कला'** की उत्पत्ति होती है। इस प्रकार तीनों विन्दु–१. संयुक्त

विन्दु '**काम**', २. श्वेत-विन्दु और ३. रक्त-विन्दु-'**कला**' मिलकर '**काम-कला**' में परिणत हुए। '**काम-कला**' को लेकर **चार शक्तियों का एकत्री-करण** हुआ। '**मूल-विन्दु**' वह विशेष तत्त्व है, जिससे जगत् की रचना हुई, दूसरा '**नाद**' है-जिसके ऊपर '**विन्दु**' की क्रमोन्नति के परिणाम से उत्पन्न द्रव्यों का नामकरण अवलम्बित है। इन दोनों में परस्पर अत्यन्त आसक्ति है, परन्तु वह आसक्ति सृष्टि-विस्तार-हीन है क्योंकि ये दोनों '**ऋत्**' एवं '**वाङ्**'-**मय** हैं। तीसरा **श्वेत**-वर्ण '**पुं**'-विन्दु स्वतः उत्पत्ति करने में असमर्थ है, वह चौथे रक्त-वर्ण '**स्त्री**'-विन्दु से संयोजित होता है। जब ये चारों तत्त्व मिलकर '**काम-कला**' में प्रवृत्त हुए, तब **सम्पूर्ण शाब्दिक** एवं **वास्तविक सृष्टि** उत्पन्न हुई।

किसी-किसी आगम में **सर्व-श्रेष्ठ देवी** '**काम-कला**' के स्वरूप का वर्णन करते हुए कहा गया है कि '**सूर्य**'-संयुक्त '**विन्दु**' ही उसका वदन है, '**अग्नि**' एवं '**चन्द्रमा**'-'**रक्त**' और '**श्वेत**' विन्दु ही उसके वक्ष-स्थल हैं तथा '**अर्द्ध-कला**'-जननेन्द्रिय है। इस विचार-सरणि से '**गर्भ**' की स्थिति सु-स्पष्ट होती है, जिससे **सृष्टि का विकास** होता है।

- **सृष्टि-विधायिनी** एक-मात्र महा-महिमावती '**शक्ति**' ही है। संस्कृत का प्रथम अक्षर '**अ**'-**शिव का प्रतीक** है तथा अन्तिम अक्षर '**ह**'-**शक्ति** का। इसी '**ह**' को **अर्द्ध-भाग** कहते हैं। इसी से यह **स्त्री-तत्त्व** है, गर्भाशय है, अर्थात् '**ह**' और **शिव**-**स्वरूप** '**अ**' का सम्मिलन ही '**काम-कला**' का **स्वतः** विकास है। प्रथम अक्षर '**अ**' और अन्तिम अक्षर '**ह**', बीच के सम्पूर्ण अक्षरों को अपने में समावेशित किए हुए हैं तथा उनके द्वारा बने हुए सम्पूर्ण शब्दों को भी। इसी से '**वाङ्-मय**' को भी उस '**महा-शक्ति**' का स्वरूप कहा गया है। उसी का स्वरूप '**परा**' है अर्थात् **वाणी चार प्रकार की है-१. परा, २. पश्यन्ती, ३. मध्यमा और ४. वैखरी।**
- **परादि वाणी** से '**ईक्षणा**' होती है। '**ईक्षणा**' से '**अहं**' का '**प्रकाश**' होता है। उसके साथ ही '**अस्मिन्**' का '**विमर्श**' होता है, जो स्वतः ही हो जाता है। '**ईक्षण**' के द्वारा आविर्भूत होने के कारण उक्त '**प्रकाश**' तथा '**विमर्श**'-दोनों ही '**शक्ति**' के ही प्रसार हैं। '**शक्ति**' का यह स्वरूप निषेध-व्यवहार-रूप है क्योंकि इस अवस्था में **निष्कल ब्रह्म-सकल** बन जाता है। '**शक्ति**' और '**शिव**' की यह संश्लिष्ट अवस्था ही **सृष्टि-रचना का कारण-भूत** है।
- '**ईक्षण**' के पश्चात् **निष्क्रिय ब्रह्म** के **सक्रिय अवस्था** में आने के लिए '**शक्ति**' और '**शिव**' का संयोग होता है। उनका पारस्परिक सम्बन्ध ही '**नाद**' कहलाता है। '**शिव**' और '**शक्ति**' की उस अवस्था में इनका निर्वचन हो सकता है। जिसके परे कुछ भी नहीं है, वह अपनी इच्छा से **अखिल विश्व की सृष्टि** करने के लिए स्पन्दित होता है। उसका **प्रथम** '**स्पन्द**'-ज्ञानी पुरुषों के द्वारा '**शिव-तत्त्व**' कहा जाता है अर्थात् '**अ**' अक्षर कहलाता है। वह शुद्ध '**ईक्षा-रूपी**' शक्ति जो, **शिव** के साथ रहती है, अपने भीतर लीन चराचर विश्व का बीज-रूप है।

✦ '**शिव**' और '**शक्ति**' को **सांख्य-शास्त्र** की परिभाषा में '**पुरुष**' और '**प्रकृति**' कहते हैं और इनसे संयुक्त '**नाद**' को '**सदाख्य तत्त्व**'। '**ईक्षण**' में जब '**अहं**' का प्रकाश होता है, तब '**शिव**' निष्क्रिय रहता है तथा '**शक्ति**' सक्रिय। इनका जो '**मिथः-समवाय**' होता है, वही '**नाद**'-तत्त्व है। इस '**मिथः-समवाय**' को तन्त्र की भाषा में '**महा-काल**' और '**महा-काली**' की विपरीत '**रति**' कहा गया है। इसी को '**शिव-शक्ति-समागम**' भी कहते हैं।

✦ '**अहम्**'-प्रकाश में **शिव** का तथा '**अस्मिन्**'-विमर्श में **शक्ति** का तादात्म्य-सम्बन्ध होता है। **सक्रिय शक्ति** एवं **क्रिया-शक्ति** के साथ जो '**नाद**' उत्पन्न होता है, उसे '**अव्यक्त**' कहते हैं। उसी को '**अजपा**' कहते हैं। इसी के द्वारा सहज प्रापञ्चिक संसरण से **शक्ति** के प्रभाव को मोड़कर उससे अखण्ड उद्गम-स्थान **निष्कल ब्रह्म** की ओर ले जाना पड़ता है।

✦ '**हं**'-**शिव पुरुष-तत्त्व** है और '**स**'-**शक्ति-तत्त्व**। इन दोनों को उल्टा करने से '**सोऽहं**' बन जाता है, जो प्रपञ्च से **परा-वाक्य** तथा **पर-ब्रह्म** की ओर ले जाता है। यही '**सोहम्**'-साधना-'**अजपा**' है। प्रवाह को विपरीत दिशा में ले जाना ही '**सोऽहं**'-साधना के श्रम-साध्य होने का कारण है। इस क्रिया में जब द्रष्टा-दृश्य-'**शिव-शक्ति**' तथा '**अहं-इदम्**' का एकीकरण हो जाता है, तब साधक को '**नाद**' की अनुभूति होती है। **शक्ति** से जो अभिन्न रहती है, वह '**उन्मना-शक्ति**' कहलाती है तथा जो **शिव** के साथ रहती है, उसे '**समना-शक्ति**' कहते हैं।

✦ आकर्षणात्मक '**हं**' और विकर्षणात्मक '**स**'-इन दो अक्षरों के सहयोग से '**हंस**'-शब्द की उत्पत्ति होती है। उसे ही **हंस-मन्त्र, सोऽहं-मन्त्र, अजपा-मन्त्र, अजपा-गायत्री, आत्म-मन्त्र, अनाहद-मन्त्र, पुं-प्रकृति-मन्त्र, ब्रह्म-मन्त्र, जीव-मन्त्र, प्राण-मन्त्र, विद्या-मन्त्र, दिन-नित्या** आदि नामों से कहा गया है। समस्त भावों के मनन का द्वार और सम्पूर्ण संसार का प्राण होने के कारण यह मन्त्र त्राण-**रूपिणी शक्ति** का कार्य करता है।

मननात् सर्व-भावानां, त्राणात् संसार-सागरात् । मन्त्र-रूपा च तच्छक्तिः, मनन-त्राण-रूपिणी।।

✦ '**हं**' और '**स**' को उलट देने से '**सोऽहं**' बन जाता है। '**सोऽहं**' से '**स**' और '**ह**' को अपहरित कर लेने पर केवल प्रणव '**ॐ**' बच जाता है। वर्तमान युग में **प्रणव** के स्वरूप को बहुत कम लोग जानते हैं। अधिकतर लोग तो **ॐ-कार** के उच्चारण को या मन-ही-मन में जप करने को '**प्रणव**' का साधन समझते हैं, परन्तु **उपनिषदों** के कथनानुसार '**ॐ-कार**' **का उच्चारण** नहीं किया जा सकता क्योंकि वह स्वर या व्यञ्जन नहीं है तथा वह कण्ठ, ओष्ठ, नासिका, जिह्वा, दन्त-मूर्द्धादि के योग से या उनके घात-परिघात से उच्चरित नहीं होता है।

अघोषमव्यञ्जनमस्वरं च, अकण्ठ-ताल्वोष्ठमनासिकञ्च।

अरेफ-जातो पयोष्ठ-वर्जितं, यदक्षरो न क्षरते कदाचित् ।।

✦ प्रणव से सभी स्वर और व्यञ्जनों की उत्पत्ति होती है। नाद-मन्त्र-विद्या, साहित्य तथा सङ्गीत की उत्पत्ति नाद से ही होती है। जब कोई वस्तु हिलती है, उससे तथा किसी अकृत-नाद, अव्यक्त कम्पन-समूह को '**नाद**' तथा '**शब्द**' कहते हैं। कान से सुनाई देनेवाले नाद को '**श्रव्य**' कहते हैं। जीव-तन्तु की अव्यक्त ध्वनियाँ कम्पन-शब्द से बनती हैं तथा जड़-जन्य में उत्पन्न होनेवाले अव्यक्त कम्पन को '**ध्वनि**' कहते हैं। अचूक रीति से श्रव्य कम्पन का आकलन करना '**श्रुति**' कहलाता है-'**श्रूयते इति श्रुतिः।**' कान जिन ध्वनियों को सुन सकें-स्पष्ट रूप से ग्रहण कर सकें, जिनके स्पष्ट उच्चारण पृथक् रूप से ज्ञात हो सकें, ऐसी अव्यक्त ध्वनियों को ही '**श्रुति**' कहते हैं।

✦ नाद के योग से **स्वर-व्यञ्जन अक्षरों का उच्चारण** होता है। **स्वर-व्यञ्जन** के सहयोग से **शब्द** बनता है। **शब्द-समूह** से '**वाच्**' अर्थात् **भाषा** बनती है। **भाषा** से ही **जगत् का व्यवहार** चलता है। इसलिए यह सम्पूर्ण जगत् ही **नाद-ध्वनि** है। **वाक्य** भाषा का भाग है। वाक्यों को नियमित रूप से **अर्थ**-सहित रखना '**वाङ्-मय**' है, चतुराई से बना हुआ भाव **भावना-मय** है। **वाङ्-मय** या '**साहित्य-सङ्गीत**'-**अव्यक्त नाद** के समूह से ही बनता है।

✦ '**नाद**' दो प्रकार के होते हैं-१. **आहत**, २. **अनाहत**। '**अनाहत नाद**'-**सङ्कट-मोचक** तथा **मुक्ति-दायक** होता है, परन्तु वह मनोरञ्जन नहीं करता। इसी नाद से '**मन्त्र-विद्या**' का निर्माण हुआ है। '**मन्त्र-विद्या**' को सिद्ध करने के लिए **सद्-गुरु** द्वारा बताए हुए '**अनाहत नाद**' के अनुसार ही चलना पड़ता है।

✦ **सच्चिदानन्द-घन-विभव** अर्थात् '**सकल परमेश्वर**' से '**शक्ति**' उत्पन्न हुई। '**शक्ति**' से '**नाद**', '**नाद**' से '**विन्दु**' की उत्पत्ति हुई, परन्तु यह **विन्दु** क्या वस्तु है? **गणित-शास्त्र** में '**विन्दु**' की परिभाषा है-जिसका कोई परिमाण न हो, परन्तु स्थान नियत हो। **तन्त्र-शास्त्र** का **विन्दु-तत्त्व** विलक्षण ही है। उसके अनुसार '**विन्दु**'-**शक्ति की एक विशेष अवस्था** है, जहाँ से इसका '**सृष्टि-क्रम**' प्रारम्भ होता है। **विन्दु** से क्रमशः **कार्य-विन्दु**, उससे नाद, नाद से **बीज**-ये तीन रूप होते हैं।

✦ **महा-विन्दु** ही **शव-रूपी सदा-शिव** है। उसके ऊपर **चित्-कला** अथवा **चिच्छक्ति स्वतन्त्र** होकर खेलती है। यह खेल **परा-वाक्य** अथवा **परा-मात्रा का विलास** है। **शुक्ल** तथा **रक्त-विन्दु**-रूपी **प्रकाश-विमर्शात्मक** '**काम-कला**' अक्षर के परस्पर सङ्घट्ट से '**चित् -कला**' की अभिव्यक्ति होती है, जो **पूर्णहन्ता** अथवा **परा-वाक्य-विभाव**-दशा में ही '**पश्यन्ती**' आदि तीन रूप धारण करती है। प्रत्येक रूप में **स्थूल**, **सूक्ष्म** तथा **पर**-भेद से तीन अवस्थाएँ हैं। **परम-तत्त्व-नीरस प्रकाश-स्वरूप** है। फिर भी तीन शक्तियों के भेद के कारण उसके तीन विभाग हैं-१. **परा** तथा **अनुत्तर**-रूपा, जिसका नाम है-'**चिच्छक्ति**'। २. **परा-अपरा**, जिसे '**इच्छा-शक्ति**' कहते हैं। ३. **अपरा**, जो **उन्मेष**-रूपा '**ज्ञान-शक्ति**' है।

✦ निराकार तेज के '**विन्दु**' से '**मातृका**' की उत्पत्ति होती है। '**मातृका**' में '**स्वर**' और '**व्यञ्जन**' सब मिलाकर ५१ हैं। ये **मातृकाएँ–सूर्य, चन्द्र एवं अग्नि की रश्मियों** में व्याप्त हैं और आकाश के वातावरण को पार करती हुई पृथ्वी पर गिरकर अनेक कौतूहल उत्पन्न करती हैं। ये शरीर के प्रत्येक भाग में व्याप्त हैं।

✦ मानव के प्रत्येक अङ्ग का रोम–रोम एक–एक ब्रह्माण्ड माना गया है, जिसकी पृथक्–पृथक् **मातृकाएँ** हैं। इनके ही साक्षात्कार को **स्वयं का जानना** कहते हैं। ग्रन्थों में वर्णित **देवता** तथा उनके **लोक**–सभी मानव–शरीर में उपस्थित हैं। उन्हें जानना **अपनी आत्मा का साक्षात्कार** कर उसका सम्बन्ध बाह्य प्रकाश से कर देना–सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त करना ही **मनुष्य का ध्येय** है।

✦ **सृष्टि, स्थिति, संहार** आदि अनेक क्रम ही इस **विराट् विश्व** की रचना के मूल कारण हैं। इसी से **मातृकाओं** द्वारा **सृष्टि, स्थिति** और **संहार–न्यासों** का अनिवार्य विधान साधना में निर्दिष्ट है। **मातृका–स्फोट ही विश्व के स्फोट** हैं। **मातृका–विद्या** ही **परा–विद्या** है। **मातृका–ज्ञान** ही **महा–विज्ञान** है, जिसे **मन्त्र–शास्त्र** के द्वारा ही जाना जा सकता है। '**मातृका**' तीन प्रकार की होती है। यथा–

१. **साङ्केतिक मातृका :** पशु–पक्षी, वृक्षादि की भाषा तथा मनुष्यों की चेष्टा तथा इङ्गित (सङ्केत) की भाषाएँ। प्रत्येक प्राणी के द्वारा तथा विविध प्रकार के वृक्षों के सङ्घर्षण से पृथक्–पृथक् ध्वनि होती है। इन ध्वनियों के अलग–अलग नाम सङ्गीत के स्वरों में बताए गए हैं।

२. **लिपि मातृका :** प्रत्येक देश–देशान्तर की भाषाएँ एवं अन्य विविध भाषाएँ।

३. **मन्त्र–शास्त्र–सम्बन्धित मातृका :** प्रत्येक देवी–देवता को प्रतिभासित करनेवाली।

✦ **मन्त्र–शास्त्र की मातृकाएँ** अपने पूर्वोक्त उद्‌गम से निकलकर सूक्ष्म–स्वरूप में आकाश से ईथर में होकर भू–मण्डल एवं पाताल में व्याप्त हैं। यह पृथ्वी चार भागों में विभक्त है– **१. रत्न-गर्भा, २. अन्नौषधि-गर्भा, ३. जीव-गर्भा** और **४. ऊसर**। अपने गुणों एवं प्रकृति के अनुसार ही ये भाग जो गर्भ धारण करते हैं, उनमें बहुत कुछ विविधता उत्पन्न होती है। यथा– **कदली सुत्ती साँप-मुख, एक बूँद गुण तीन।**

उदाहरण के लिए केवल **सूर्य** में से प्रकाशित **सूर्य की रश्मि**–पृथ्वी में **माणिक** का गर्भाधान करती है। सूर्य की वही **रश्मि–चन्द्रमा** के साथ होने से **मोती** का गर्भाधान करती है। कारण यह है कि **सूर्य–रक्त-वर्ण** है और **चन्द्रमा–श्वेत-वर्ण**। दोनों के सामञ्जस्य से **सूर्य-रश्मि** दो प्रभाववाली हो गई, जिससे दो विशेषताएँ मोती में हो गईं–एक **श्वेत रङ्ग**, दूसरा प्रकाश; एक **चन्द्र-गुण** दूसरा **सूर्य-गुण**। इसी प्रकार **मङ्गल** के साथ होने से **मूँगा, बुध** के साथ होने से **पन्ना, गुरु (बृहस्पति)** के साथ होने से **पुखराज, शुक्र** के साथ से **हीरा** और **शनि** के साथ से **नीलम** आदि।

उक्त रश्मियाँ **ग्रह, नक्षत्र, योग, करण, पञ्च-भूत, तन्मात्रा, त्रिगुण** एवं **स्वभाव** आदि के साथ नई–नई वस्तुओं का सृजन करती हुई तथा परस्पर सम्बन्ध स्थिर करती हुई **दस प्रकार की सृष्टि, चार प्रकार**

के जीव (अण्डज, स्वेदज, उद्भिज, जरायुज) तथा सर्व-सृष्टि के जड़-चैतन्य-विभाग आदि का निर्माण तथा सृजन स्वाभाविकता से करती रहती हैं। यह सब **मातृका का नैसर्गिक विलास है**, जो स्वेच्छा से ही हो रहा है। इस विलास के तारतम्य को **'विश्व-प्रकाश'** कहते हैं–

या सा तु मातृका देवी, पर-तेज-समन्विता। तया व्याप्तमिदं विश्वं, स-ब्रह्म-भुवनान्तकम् ।।

✦ जैसे एक वट-वृक्ष के छोटे-से बीज में बरगद का बहुत विशाल वृक्ष अन्तर्निहित रहता है, वैसे ही **मातृकाएँ** भी **ब्रह्मा से कीट-पर्यन्त स्थावर, जङ्गम, अणु, परमाणु** आदि सबमें ओत-प्रोत हैं। जिसने जितने अंश में उनका **स्फोट** कर लिया–**साक्षात्कार** कर लिया, उसने उतने ही अंशों में सफलता प्राप्त कर ली। **ब्रह्माण्ड-सृजन** के उद्‌गम का कारण यही है। इसे ही **'अहं'** और **'इदं'** कहा जाता है।

✦ **'मातृका-विज्ञान'**–समस्त शास्त्रों को अपने ज्ञान से प्रकाशित करता है। **शब्द-शास्त्र** (व्याकरण), **ज्योतिष, योग** आदि दर्शन की विविध प्रक्रियाएँ इसकी मुख्य मार्ग-प्रदर्शिका हैं। इन सबमें **'मन्त्र-शास्त्र'** विशेष उपादेय है, जिसका एक-मात्र प्रतिपाद्य विषय **'मातृका'** ही है। **'मातृका-स्फोट'** ही विज्ञान है, जिसका साधन **'मन्त्र-साधना'** द्वारा ही किया जा सकता है। **'मन्त्र-शास्त्र'** में वर्णित **'मातृका'** अनेक प्रकार की है– **१. भूत-लिपि, २. मालिनी, ३. पञ्च-भूत, ४. मधु-मति** और **५. अङ्ग-मातृका** आदि। 'भूत-लिपि' आदि **मातृकाओं** के भी अनेक भेद हैं, जिनकी संख्याएँ हैं– **भूत-लिपि ४२, मालिनी ४९, पञ्च-भूत ५०, मधु-मती २०४, अङ्ग-मातृका २५५** तथा **मुख्य मातृका ५१।**

✦ जिस प्रकार **आयुर्वेद** में **वात, पित्त** और **कफ**–ये तीन प्रधान विषय हैं, उसी प्रकार **मातृकाओं** में भी **सत्, रज** और **तम** तीनों गुण हैं। ये तीनों गुण **सूर्य, चन्द्र** और **अग्नि** के रूप में हैं, जो जगत् को प्रतिभासित करते हैं। इन तीनों का विस्फोट होते-होते इसके ६३ भेद हो जाते हैं। **आयुर्वेद में ६ रस हैं**, जिनका स्फोट होते-होते ६२ भेद हो जाते हैं। केवल **'वात', 'पित्त'**, तथा **'कफ'** के वैचित्र्य या वैलक्षण्य का प्रतिपादन करते-करते एक शास्त्र तैयार हो गया, जिसे **'आयुर्वेद'** कहते हैं। **नौ ग्रह, द्वादश राशि, २७ नक्षत्रों** के प्रतिपादन एवं प्रसार में **'ज्योतिष-शास्त्र'** बन गया, जिसके ४ लाख ग्रन्थ हैं। इसी प्रकार **५१ मातृकाओं** के विषय का स्फोट करते-करते एक बहुत बड़ा **'मन्त्र-शास्त्र'** निर्मित हो गया।

✦ **'मातृका-स्फोट'** से **दैवत्त्व** और **दैवत्व** से **पूज्यत्व** प्राप्त होता है। **पूज्यत्व** में अपनी **मातृकाओं** का **स्फोट** करके देवता के **अङ्ग-उपाङ्गों** में **अवस्थित देव-मातृकाओं** का **पूजन** किया जाता है। अपनी स्फोट की हुई **देव-मातृकाओं** में **मानवीय मातृकाओं** का समावेश किया जाता है। उनके **स्वरूप, नाम, आयुध** और **वाहन**–सब पृथक्-पृथक् होते हैं। उन सबकी पूजा की जाती है। एक ही देव अपनी शक्ति से अनेक हो जाता है। उस समय उसका **स्वरूप, नाम, मातृका, वाहन** आदि पृथक्-पृथक् हो जाते हैं। साधक वाञ्छित स्वरूप से तादात्म्य करने के लिए तत्सम्बन्धी **नाम-रूप आयुध** का ही ध्यान करता है।

मन्त्र-सिद्धि के लक्षण

✦ '**मन्त्र-सिद्धि**' हुई या नहीं, इसके प्रति थोड़ा ध्यान देने से साधक स्वयं समझ सकता है। अकल्पित रूप से मन-चाहे कामों का होना, दुर्घटना से बाल-बाल बच जाना, जिसे देखना चाहे-वह अचानक आ पहुँचे अर्थात् आशातीत बातों का होना '**मन्त्र-सिद्धि**' के ही लक्षण हैं। इसी प्रकार विपरीत बातों के होने से यह समझना चाहिए कि '**मन्त्र-साधना**' में कोई त्रुटि है।

✦ बाह्य घटनाओं के अतिरिक्त साधक यदि ध्यान दे, तो वह अपनी बुद्धि एवं अन्य ज्ञानेन्द्रियों से भी सूक्ष्म लक्षणों द्वारा अपनी '**मन्त्र-सिद्धि**' को अनुभव कर सकता है। इसके लिए उसे तीव्र भावना से देखने और सुनने की चेष्टा करनी चाहिए। थोड़े ही दिनों में अपने शरीर के भीतर होनेवाली प्रतिक्रियाएँ अनुभव में आने लगेंगी। '**सुषुम्ना**' में एक प्रकार का **तेज प्रकाश** हो जाएगा, **षट्-चक्र** दिखाई देने लगेंगे। यदि लगन से सारे विचारों को मन से निकाल कर एक चित्त से देखने की चेष्टा की जाए, तो अधिक समय नहीं लगता। पहिले '**सुषुम्ना**' में तारे-से छिटके दिखाई देते हैं। शरीर के भीतर कई स्थानों में तारे (प्रकाश के छींटे-से) दृष्टि-गत होने लगते हैं। चित्त में अपने आप उत्साह और उल्लास भर जाता है।

उक्त लक्षण तो **जाग्रत अवस्था** के हैं। इसी प्रकार रात्रि में सोते हुए भी साधक को सिद्धि की ओर सङ्केत करनेवाले **स्वप्न** आते हैं। ध्यान रहे! इन **स्वप्नों** को या जगते हुए अनोखी बातें यदि हों या दिखाई दें या सुनाई पड़ें अथवा अनुभव में आएँ, तो उन्हें भूल कर भी **गुरुदेव** के सिवा अन्य किसी से न कहना चाहिए, अन्यथा सिद्धि में रोड़ा अटक जाता है और साधना वहीं-की-वहीं रह जाती है।

अन्त में यहाँ कुछ **स्वप्नों** का उल्लेख किया जाता है, जो सिद्धि प्राप्त होने से पहले प्रायः दिखाई देते हैं-

१. स्वप्न में **इष्ट-देव** के दर्शन होना। २. प्रसन्न मुद्रा में **श्री गुरु-देव** का दर्शन होना। ३. **गुरु-देव** को कुछ आदेश करते हुए देखना। ४. **गुरु-देव** या **इष्ट-देव** अथवा कोई **सौभाग्यवती स्त्री** या **कन्या** अपने को कोई फूल या फल दे। ५. साफ **पूर्णिमा का चन्द्रमा** दिखाई दे। ६. **गङ्गा जी, सूर्य** या **शिव-लिङ्ग** दिखाई दे। ७. कहीं से **पृथ्वी (जमीन, खेत)** मिले। ८. नाव में बैठ कर **नदी, तालाब** या **समुद्र** के एक किनारे से दूसरे किनारे जाए। ९. **आग** की पूजा करे।

१०. जलती हुई **आग** दीखे। ११. **हवन** होता हुआ दिखाई दे। १२. किसी लड़ाई में अपनी **विजय** होती हुई दिखाई दे। १३. **हंस, कोयल** या **मोर** दिखाई दे। १४. किसी वाहन पर बैठ कर कहीं जाए। १५. **कन्या, छत्र, रथ, दीपक, आलीशान महल, कमल, हाथी, बैल, फूलों की माला, रुद्राक्ष की माला, समुद्र, हरा पेड़, पर्वत, घोड़ा, शराब, कच्चा मांस** या **मल-मूत्र** दिखाई दे। १६. **सूर्य** उगता हुआ दिखाई दे। १७. **तारों से भरा हुआ आकाश** देखे। १८. किसी **बड़ी हवेली** में या **पर्वत** पर अथवा **पेड़** पर अपने आपको चढ़ता हुआ देखे। १९. **हाथी, घोड़े, बैल** पर सवारी करते हुए अपने आपको देखे। २०. **हवाई जहाज, मोटर, ताँगा, रिक्शा, साइकिल** आदि पर अपने आपको सवार देखे।

२१. स्वप्न में मद्य पिए या कच्चा मांस खाए। २२. अपने शरीर से मल-मूत्र चुपड़ते देखे। २३. रक्त से अपने आपको नहाते देखे। २४. दही और चावल खाए। २५. सफेद कपड़े पहिने या सफेद चन्दन अपने शरीर में लगाए। २६. स्वप्न में सिंहासन, रथ, सवारी, ध्वजा, रत्न, गहने देखे। २७. अपना या किसी दूसरे का राज्याभिषेक होता देखे। २८. स्वप्न में गुरु, देवता, ब्राह्मण, कन्या, गाय, हाथी, घोड़ा, सिंह (शेर), दर्पण, शङ्ख, सारङ्गी, हारमोनियम, गाने-बजाने के सामान में से कुछ देखे। २९. स्वप्न में पक्वान्न, मिठाई या पान खाए। ३०. मोतियों की माला या तेज तपता हुआ सूर्य देखे।

३१. अपने को सफेद साँप काट खाए। ३२. सपने में अपना बन्धन (बँधना) देखे। ३३. स्वप्न में रोए, दौड़े, अपने हाथ-पैर पीटे। ३४. अपने कोई पङ्खा झले या किसी के खुद पङ्खा करे। ३५. पानी, दूध या शराब से भरा घड़ा दीखे। ३६. मछली, घी या गोरोचन दीखे। ३७. बिना रोने-पीटने के मुर्दा दिखाई दे। ३८. किसी को वेद-मन्त्रों को बोलता हुआ देखे या मङ्गल गाना-बजाना देखे। ३९. चाबुक या अंकुश या हथियार दिखाई दे। ४०. सफेद वस्त्र पहिने, सफेद माला पहिने स्त्री अपने से मिले।

४१. स्वप्न में कोई दही या घी दे। ४२. तालाब के बीच में नाव पर बैठ कर या पानी में अपने आपको घी और खीर मिलाकर खाता देखे। ४३. घोड़ी, गाय, हथिनी को ब्याते हुए देखे। ४४. अपने को कोई अग्नि दे। ४५. घोड़ी, भैंस, शेरनी, गाय या हथिनी को दूध दुहाती देखे। ४६. अपना सिर कटता देखे। ४७. अपनी मृत्यु होते देखे। ४८. स्वप्न में देवता देखे। ४९. स्वप्न में पितर, गाय, ब्राह्मण या राजा देखे। ५०. अपने आपको सोने-चाँदी के बर्तन में भोजन करते देखे।

✦ 'स्वप्न' में उक्त लक्षणों के सामने आते ही चुपचाप दूने उत्साह से साधना में लग जाना चाहिए। ऐसे अवसर पर लापरवाही करने से सब काता-कूता कपास हो जाता है। एक बात का सदा ध्यान रखे। भूलकर भी किसी 'सिद्धि' का अभिमान न करे या किसी को चमत्कार दिखाने की बात भूलकर भी न सोचे-भले अपना कितना ही बड़ा अपमान क्यों न होता हो। 'वाक्-सिद्धि'-मन्त्र-साधना में सफलता की पहिली सीढ़ी है। इसके चक्कर में पड़कर किसी को 'आशीर्वाद' या 'शाप' न देने लगे। नहीं तो हाथ मलकर पछताना पड़ेगा। सारांश यह है कि 'मन्त्र-सिद्धि' के लक्षणों के अनुभव होते ही साधक को 'पूरी सावधानी' और 'उत्साह' के साथ लगन-पूर्वक अपनी 'साधना' में तत्पर होना चाहिए। इसके लिए साधक को 'मौन व्रत' या 'कम-से-कम बोलने का अभ्यास' अति सहायक सिद्ध होता है।

मनन करने योग्य बातें

'जप' की अनेक प्रकार की विधियाँ पाई जाती हैं, जो विश्वास, श्रद्धा, गुरु-सेवा, अन्तः-करण-शुद्धि, बहिः-शुद्धि और दैवी-जगत् पर पूर्ण निर्भर रहने से सफल होती हैं।

मन्त्र-कल्पतरु

मन्त्र-साधना के अङ्ग

पं० श्रीकान्तबिहारी मिश्र

प्रणव-जप ओंकार का जप

महन्त श्रीकिशोरदास जी

ॐ-कार का अनुभूत जप

परम पूज्य
ॐ महाराज

मन्त्र-विद्या, सङ्गीत, साहित्य के भौतिक परिणाम

डॉ श्री वी०वी० गोरे

'मन्त्र-साधना' के अङ्ग

✦ 'मन्त्र-जप' में 'मन्त्र-साधन' के अङ्गों पर ध्यान देना आवश्यक है क्योंकि अङ्गों के साथ जप करने से बहुत शीघ्र फल मिलता है। ये **अङ्ग १६** हैं। यथा–

(१) भक्ति–(क) गौणी (साधन-काल की भक्ति)। (ख) परा (सिद्ध अवस्था की भक्ति)।

'गौणी' का भेद है–**'वैधी'**, जो **नवधा** है। **'परा'** का भेद है–**'रागात्मिका'**। **'नवधा'** और 'रागात्मिका' का विस्तार इस प्रकार है–

वैधी (नवधा भक्ति)–**१. श्रवण, २. कीर्तन, ३. स्मरण, ४. पाद-सेवन, ५. अर्चन, ६. वन्दन,** ७. दास्य, ८. सख्य, ९. आत्म-निवेदन। क्रमाङ्क १ से ६ की भक्ति प्रथम अवस्था की भक्ति हैं। क्रमाङ्क ७-८-९ इन तीनों की परिसमाप्ति **'रागात्मिका'** में होती है।

रागात्मिका (क) सात गौण रस–**१. हास्य** (गोपाल बालक), **२. वीर** (भीष्म पितामह) **३. करुण** (दशरथ), **४. अद्भुत** (बलि, अर्जुन, यशोदा), **५. भयानक** (कंस), **६. वीभत्स** (अघासुर), **७. रौद्र** (इन्द्र)। (ख) सात मुख्य रस–**१. दास्य** (श्री हनुमान), **२. सख्य** (अर्जुन, उद्धव), **३. वात्सल्य** (दशरथ, कौशल्या, नन्द-यशोदा), **४. कान्ता** (व्रज-गोपी), **५. आत्म-निवेदन** (श्रीनारद), **६. गुण-कीर्तन** (श्रीव्यास), **७. तन्मया शक्ति** (श्रीहरि, श्रीहर, श्रीराम-कृष्ण-देव)।

(२) शुद्धि–(क) शरीर-**शुद्धि–१. मान्त्र, २. भौम, ३. आग्नेय, ४. वायव्य, ५. दिव्य, ६. वारुण्य, ७. मानस**। (ख) **मन-शुद्धि–दैवी सम्पत्ति के अभ्यास से**। (ग) **दिशा-शुद्धि–पूर्व-**उत्तर-मुख बैठकर मन्त्र-जप-ध्यान करने से। **(घ) स्थान-शुद्धि–गो-मय से अथवा १. पीपल, २. बरगद, ३. अशोक, ४. बिल्व, ५. आँवला** के नीचे बैठकर 'मन्त्र-जप' आदि करने से।

(३) आसन–१. स्वास्तिक, २. परमासन।

(४) पञ्चाङ्ग-सेवन–१. चण्डी, गीता, २. सहस्र-नाम, ३. स्तव, ४. कवच, ५. हृदय का पाठ।

(५) आचार–१. दिव्य, २. वाम, ३. दक्षिण।

(६) धारणा–१. अन्तर्धारणा, २. बहिर्धारणा।

(७) दिव्य देश-सेवन–१. अग्नि, २. जल, ३. लिङ्ग, ४. स्थण्डिल, ५. कुण्ड, ६. पट, ७. मण्डल, ८. विशिख, ९. नित्य-यन्त्र, १०. भाव-यन्त्र, ११. पीठ, १२. विग्रह, १३. विभूति १४. नाभि, १५. हृदय, १६. मूर्धा।

(८) प्राण-क्रिया–१. प्राणायाम, २. कर-न्यास, ३. अङ्ग-न्यास, ४. मातृका-न्यास, ५. ऋष्यादि-न्यास।

(९) मुद्रा–अपने-अपने इष्ट-देव की पृथक्-पृथक् मुद्रा।

(१०) तर्पण–१. अपने इष्ट-देव का तर्पण, २. अन्य देव-देवियों का तर्पण, ३. ऋष्यादि-तर्पण, ४. पितृ-तर्पण। (११) हवन, (१२) बलि, (१३) याग-१ अन्तर्याग, २. बहिर्याग, ३. उप-याग। (१४) जप–१. वाचिक, २. उपांशु, ३. मानस। (१५) ध्यान–अपने-अपने इष्ट-देव के रूप का ध्यान। (१६) समाधि–महा-भाव।

'प्रणव-जप' अर्थात् 'ॐ-कार' का जप

✦ **'ईश्वर'**–पदार्थ है। उसके **शब्द-मय चिन्तन का सङ्केत** 'ॐ-कार' है। ईश्वर-सम्बन्धी सभी शब्द-मय चिन्तन का सङ्केत 'ॐ' द्वारा ही शास्त्रों में किया गया है। 'ॐ' की इस मान्यता का मुख्य कारण यह है कि **'प्रणव'** के जप से **चित्त की स्थिरता** जितनी सरलता से होती है, उतनी सहजता अन्य किसी शब्द के जप में अनुभव नहीं होती।

✦ 'ॐ' के सम्बन्ध में, 'श्रुति' का वचन है–**'एतदालम्बनं श्रेष्ठमेदालम्बनं परम्।'**

अर्थात् **परमार्थ-साधन** के विविध आलम्बनों में **'प्रणव'** ही श्रेष्ठ और परम आलम्बन है।

✦ 'भाष्य-कार' कहते हैं–**प्रणवस्य जपः, प्रणवाभिधेयस्य च** ईश्वरस्य भावना, तदस्य योगिनः **प्रणवं जपतः, प्रणवार्थं च भावयतश्चित्तम् एकाग्रं सम्पद्यते। तथा चोक्तम्–स्वाध्यायाद् योगमासीत्, योगात् स्वाध्यायमनेत् (स्वाध्यायमासते)। स्वाध्याय-योग-सम्पत्त्या परमात्मा प्रकाशते।**

अर्थात् **'प्रणव'** का जप और उसका अभिधेय **ईश्वर की भावना** है। इस प्रकार 'प्रणव' में जप-शील और **प्रणवार्थ-भावना-शील योगी** का **चित्त एकाग्र** होता है। कहा भी है–**स्वाध्याय से योगारूढ़** हो, जब **योग से स्वाध्याय** का उत्कर्ष करोगे, तब **'स्वाध्याय'** और **'योग'**-रूपी सम्पत्ति द्वारा **परामात्मा** प्रकाशित होंगे।

✦ **'प्रणव'** के स्मरण-मात्र से ही जिनके मन में **सर्वज्ञता** आदि गुणवाले ईश्वर की स्मृत्ति आ जाती है, वे ही **वास्तविक योगी** हैं। उनके द्वारा जो **'प्रणव का जप'** एवं उसकी **अर्थ-चिन्ता** होती है, वही चित्त को स्थिर करनेवाला **'ईश्वर-प्रणिधान'** नामक साधन है। **'स्वाध्याय'** अर्थात् निरन्तर **'प्रणव-जप'** से **योग या चित्त की एकाग्रता** होती है। **'योग'** द्वारा अर्थात् **चित्त** की एकाग्रता से प्राप्त अन्तर्दृष्टि के द्वारा **सूक्ष्म अर्थ का ज्ञान** होकर **'स्वाध्याय का उत्कर्ष'** होता है। सूक्ष्म-तर अर्थ के प्रति लक्ष्य रखकर पुनः-पुनः जपन-शील होना ही **'स्वाध्याय'** है। इस प्रकार **'स्वाध्याय'** के द्वारा **'योग'** का एवं **'योग'** के द्वारा **'स्वाध्याय'** का अभ्यास होने से **परमात्मा** प्रकाशित होते हैं अर्थात् साधक को **आत्म-ज्ञान** की प्राप्ति होती है। **'प्रणव'** और **'गुरु -मन्त्र'** में कोई भेद नहीं है। **'शास्त्र'** कहते हैं--

यः सर्व-भूत-चित्तज्ञो, यश्च सर्व-हृदि स्थितः। यश्च सर्वान्तरे ज्ञेयः, सोऽहमस्मीति चिन्तयेत् ।।

अर्थात् जो सभी प्राणियों के चित्तों को **जानता है,** जो सभी के हृदय में वर्तमान है, जो सभी के अन्तर में जानने की वस्तु है, वही मैं हूँ–यह चिन्तन **'मन्त्र-जप'** के समय सदा किया करे।

शम्भोः प्रणव-वाच्यस्य, भावना तज्जपादपि । आशु सिद्धिः परा प्राप्या, भवत्येव न संशयः।
एकं ब्रह्म-मयं ध्यायेत्, सर्वं विप्र! चराचरम् । चराचर-विभागं च, त्यजेदहमिति स्मरन् ।।

अर्थात् **प्रणव** का वाच्य जो **ईश्वर** है, उसकी भावना **प्रणव** के जप से मिलकर ही रहती है, इसमें सन्देह नहीं। हे विप्र! सभी **चराचर विश्व को ब्रह्म-मय 'एक'** के रूप में ध्यान करे और 'अहम्' का स्मरण करता हुआ **चराचर-विभाग** या **द्वैत-बुद्धि** को त्याग दे।

✦ '**प्रणव-जप-रूपी**'–'**ईश्वर-प्रणिधान**' का साधन '**हृदय**' में करना चाहिए। **प्रथमाधिकारी-साकार** ईश्वर का ही प्रणिधान सहज समझते हैं। उन्हें अपने हृदय में **ज्योतिर्मय ईश्वर के रूप की कल्पना** करनी चाहिए। मुक्त पुरुष जिस प्रकार **स्थिर-चित्त** और **परम-पद** में स्थित होने के कारण प्रसन्न-मुख रहते हैं, उसी प्रकार अपनी **ध्येय मूर्ति** की चिन्ता करते हुए, उसी में अपने को ओत-प्रोत भाव में स्थित रहने का ध्यान करना चाहिए। '**प्रणव-जप**' द्वारा अपने को **ईश्वर के प्रतीक** में स्थित, निश्चिन्त और प्रसन्न रखना चाहिए।

उक्त अभ्यास से जब चित्त कुछ स्थिर, निश्चिन्त और ईश्वर-भाव में स्थित रहने में समर्थ हो, तब हृदय में **शुभ्र, स्वच्छ, असीम आकाश की धारणा** करनी चाहिए। **आकाश के मध्य में सर्व-व्यापी ईश्वर की** सत्ता है, यह जानकर उसमें '**अहमत्व**' को ओत-प्रोत-भाव से स्थित करना चाहिए अर्थात् यह ध्यान करना चाहिए कि '**मैं ही उस हृदयाकाशस्थ ईश्वर में अवस्थित हूँ।**' इसके बाद **हृदयाकाश** में स्थित **ईश्वर के चित्त में अपने चित्त को मिलाकर** निश्चिन्त, **सङ्कल्प-शून्य तृप्त-भाव** से '**अवस्थान**' का अभ्यास करना चाहिए।

✦ '**मुण्डकोपनिषद्**' में उक्त प्रणाली का बहुत सुन्दर वर्णन है–

प्रणवो धनुः शरो ह्यात्मा, ब्रह्म तल्लक्ष्यमुच्यते। अप्रमत्तेन वेद्दव्यं, शर-वत् तन्मयो भवेत् ।।

अर्थात् **ब्रह्म** या **हृदयाकाश में स्थित ईश्वर ही लक्ष्य-स्वरूप** है। **प्रणव-धनुः-स्वरूप** है और **अहं-भाव-शर-स्वरूप** है। '**अप्रमत्त**' अर्थात् सदा स्मृत्ति-युक्त रहते हुए **ब्रह्म-लक्ष्य में अहङ्कार** को प्रविष्ट कराकर उसे तन्मय करना होता है अर्थात् '**ॐ**' द्वारा– **मैं ही हृदयाकाशस्थ ईश्वर में स्थित हूँ**'–इस प्रकार का भाव रखते हुए ध्यान करना होता है।

उक्त ध्यान में अभ्यस्त होने पर साधक '**ध्यान-काल**' में अपने **हृदय में आनन्द का अनुभव** करता है। आनन्द के उक्त बोध को ही '**मैं हूँ**'–इस प्रकार स्मरण कर '**ग्रहण-तत्त्व**' में जाना होता है। फिर **अति स्थिर** और **प्रसन्न-चित्त** से अपने चित्त को **निरुद्ध** और **ईश्वर-भाव** से भावित करना होता है। सावधानी के साथ **दीर्घ-काल तक निरन्तर श्रद्धा-सहित अभ्यास** करने पर '**ईश्वर-प्रणिधान**' का वास्तविक फल मिलता है।

✦ '**जप**' के समय '**ओ**' को शीघ्र और '**म्**' को दीर्घ तथा **एकतान-भाव से उच्चारण** करना चाहिए। मन-ही-मन में उच्चारण करना उत्तम है। जिस '**जप**' में जिह्वा कुछ भी न हिले, वही श्रेष्ठ है। एक प्रकार का और **उत्तम जप** है, जो '**अनाहत नाद**' के साथ होता है। मन में ऐसा होना चाहिए कि '**अनाहत-नाद**' ही '**मन्त्र-रूप**' में सुन रहे हैं। '**तन्त्र-शास्त्र**' में इसे '**मन्त्र-चैतन्य**' कहते हैं–

मन्त्रार्थं मन्त्र-चैतन्यं, योनि-मुद्रां न वेत्ति यः। शत-कोटि-जपेनापि, नैव सिद्धिः प्रजायते।।

अर्थात् **मन्त्र का अर्थ, मन्त्र-चैतन्य** और **योनि-मुद्रा** जो नहीं जानता, वह सौ करोड़ भी जप करे, तब भी उसे सिद्धि नहीं मिलती। '**सोऽहं**' भाव ही सर्वोत्तम '**योनि-मुद्रा**' है। वही योगियों द्वारा ग्राह्य है।

✦ '**मन्त्र-जप**'-रूपी **ईश्वर-प्रणिधान** का साधन **भक्ति**-पूर्वक करना चाहिए। **ईश्वर के स्मरण** से सुख-बोध होने पर **बोध-मय** और **महत्त्व-बोध-युक्त** जो '**अनुराग**' होता है, उसी को '**भक्ति**' कहते हैं। प्रिय-जन को स्मरण करने पर जैसा सुख-बोध हृदय में होता है और बार-बार स्मरण करने की इच्छा होती है, **ईश्वर-स्मरण** भी जब उसी तरह का होगा, तब समझना चाहिए कि '**भक्ति-भाव**' व्यक्त हो रहा है। एक साधना और है–प्रिय जन को स्मरण करने से हृदय में सुख-बोध उदित होने पर, उस सुख-बोध को स्थित रखे और प्रिय-जन को त्याग कर, उस स्थान में उसी सुख-बोध के साथ **ईश्वर की चिन्ता** करने पर '**भक्ति-भाव**'–**शीघ्र व्यक्त** और **वर्द्धित** होता है।

✦ '**प्रणव**'-**जप** का एक और सङ्केत है–'**ओ**' के उच्चारण-काल में **ध्येय-भाव** को स्मरण करे और **दीर्घ एकतान** '**म्**' के उच्चारण में उस **ध्येय-भाव को स्थित** करे। **श्वास-प्रश्वास** के साथ इस प्रकार '**प्रणव**' का जप करने से अभीष्ट फल प्राप्त होता है। **सहज भाव** से श्वास लेते हुए '**ॐ**' के उच्चारण-पूर्वक **ध्येय-भाव में मन** को स्थित करे। इस प्रकार के '**जप**' से चित्त एक ही ध्यान में न्यस्त रहता है।

उक्त प्रकार की भावना के साथ '**मन्त्र-जप**' होने से ही चित्त एकाग्र भूमिका को पा सकता है। भूमिका का लाभ होने से '**सम्प्रज्ञात योग**' और उसके बाद '**असम्प्रज्ञात योग**' सहज रूप से सिद्ध हो जाते है।

✦ शास्त्रोक्ति है कि '**यज्ञ**' से ही सबकी उत्पत्ति होती है। अतएव '**यज्ञ**' नित्य करना चाहिए। '**गीता**' में भगवान् कहते हैं–'**यज्ञानां जप-यज्ञोऽस्मि।**' अर्थात् यज्ञों में श्रेष्ठ '**जप-यज्ञ**' मैं हूँ। अभिप्राय यह है कि प्रत्येक व्यक्ति को '**जप-यज्ञ**' अवश्य करना चाहिए। कहा भी है–

आरम्भ-यज्ञा क्षत्राश्च, हविर्यज्ञा विराः स्मृताः । परिचार-यज्ञा शूद्राश्च, जप-यज्ञा द्वि-जातयः ।।

अर्थात् जो क्षात्र-धर्म धारण करना चाहता है, वह उद्योग करे। जो वैश्य होना चाहता है, वह अग्नि-होत्र करे। जो शूद्र रहना चाहता है, वह सेवा करे और जो द्वि-जाति होना चाहता है, वह '**जप**' करे। इस सम्बन्ध में निम्न प्रख्यात उक्ति स्मरणीय है–

जन्मना जायते शूद्रः, संस्काराद् द्विज उच्यते। वेदाभ्यासी भवेद् विप्रः, ब्रह्म् जानन्ति ब्राह्मणाः।।

अर्थात् जन्म से प्रत्येक व्यक्ति '**शूद्र**' होता है। संस्कार होने पर वह '**द्विज**' कहलाता है। '**वेद**' का अभ्यास करने पर वह '**विप्र**' बनता है और इस प्रकार '**ब्रह्म**' को जाननेवाले '**ब्राह्मण**' होते हैं।

✦ **यज्ञोपवीत-संस्कार** में ब्रह्मचारी को '**गायत्री-मन्त्र**' सिखाया जाता है, जिसके '**जप**' द्वारा '**शुक्ल संस्कार**' अर्थात् **शुद्ध भाव** उत्पन्न होता है और '**कृष्ण कर्म**' अर्थात् पूर्व-जन्म के पाप-कर्मों के संस्कार दूर हो जाते हैं। उससे '**शूद्रता**' दूर होकर '**द्विजत्व**' प्राप्त होता है। '**गायत्री मन्त्र**' के निरन्तर स्वाध्याय से '**ब्रह्म संस्कार**' दृढ़ हो जाता है और '**अविद्या**' नष्ट हो जाती है। इस प्रकार '**विद्या**'-सम्पन्न होने से '**विप्रत्व**' आता है और जब '**विद्या**' की सहायता से '**अविद्या**' पूर्ण रूप से समाप्त हो जाती है, तब '**समाधि**' की उपलब्धि होती है और '**ब्रह्म**' का साक्षात्कार हो जाता है। तब '**ब्राह्मणत्व**' की प्राप्ति होती है। यह है '**गायत्री-मन्त्र**' के जप का प्रभाव।

- 'गायत्री-मन्त्र' और 'प्रणव' में कोई भेद नहीं है। 'प्रणव' वास्तव में 'गायत्री मन्त्र' का ही सूक्ष्म रूप है। परमहंस रामकृष्ण देव कहते थे कि ''चारों वेदों का लय 'सन्ध्या-कर्म' में होता है और 'सन्ध्या' का लय 'गायत्री' में। फिर 'गायत्री' का लय-'प्रणव' में होता है।'' इससे सिद्ध है कि 'प्रणव' का जप सर्व-श्रेष्ठ है।
- 'प्रणव'-ईश्वर का नाम है और ईश्वर के अनेक नाम हैं। अतः जिस नाम में रुचि हो, उसी का 'जप' कर सकते हैं। तन्त्र-शास्त्र में शिव जी कहते हैं-

जपात् सिद्धिर्जपात् सिद्धिर्जपात् सिद्धिर्न संशयः। सत्यं वच्मि, सत्यं वच्मि, सत्यं वच्मि च पार्वति!।।

यहाँ 'त्रिसत्य' करके अर्थात् तीन बार कहकर भगवान् शङ्कर ने 'जप' करने को कहा है। अतएव 'जप' अवश्य करना चाहिए, किन्तु पवित्रता, विश्वास, प्रेम और श्रद्धा के साथ। तभी 'जप' सिद्ध होता है।

'मन्त्र-जप' के आवश्यक विधान

- १. पवित्रता-इस सम्बन्ध में तुलसीदास जी कहते हैं कि 'अन्तर मलिन विषये मन अति, तन पावन करिए परवारे। मरइ न उरज अनेक जतन, वल्मीक विविध विधि मारे।' अर्थात् 'अन्तर' और 'बाहर' की पवित्रता। बाहर की पवित्रता तो 'शौच-क्रिया' से होती है और आन्तरिक पवित्रता के लिए परमहंस देव ने एक उत्तम विधि बताई है-''जप करने के पहले हृदय में कल्पना द्वारा शीशे का एक घेरा बनाए, जिसके भीतर से बाहर का दृश्य दिखाई पड़ता हो। अब मन में सङ्कल्प करे कि जब तक बैठा हूँ, बाहर न देखूँगा। भीतर जो इष्ट-देव हैं, केवल उन्हें ही देखूँगा। जब मन स्वभाव-वश बाहर जाने लगे, तब उसे रोककर भीतर ही लाए। साथ ही उस घेरे में कीड़े-मकोड़े, गर्द आदि जो हमारे मलिन विचार हैं, उन्हें साफ करता रहे। इसके लिए उस घेरे में एक नाली की भावना करे, जिससे होकर मलिन विचारों की मैल धोने पर बह जाए, किन्तु यह कभी न देखे कि वह मैल बहकर कहाँ गई। हाँ, मैल उस घेरे से बाहर अवश्य चली जाए। फिर उस नाली को बन्द कर दे। तब ऐसी कल्पना के साथ कि अब कोई मैल नहीं है, निश्चिन्त मन से जप करे।''
- २. विश्वास-अर्थात् नाम जपने से मङ्गल होगा ही ऐसा विश्वास रखना चाहिए। कितनी भी विपत्ति आए, कितना भी मन में तर्क उपस्थित हो, इस विश्वास से कदापि न डोले। यह उक्ति सदा ध्यान में रखे कि-भाव कुभाव अनख आलसहूँ, नाम जपत मङ्गल दिशि दसहूँ।

कोई कह सकता है कि यह तो अन्ध-विश्वास हुआ, परन्तु यह तो सभी मानते हैं कि 'विश्वास' होना ही चाहिए और 'विश्वास' के आँख होती नहीं, वह सदा ही अन्धा होता है। एक लौकिक उदाहरण है-किसी ने मजनूँ से कहा कि 'तुम्हारी लैला काली-कलूटी और कर्कशा है, तुम उसे क्यों प्यार करते हो?' इस पर उसने कहा था कि 'तुम यदि मेरी आँखों से उसे देखो, तब पता चलेगा कि वह कितनी सुन्दर और सुघड़ है।' भाव यह है कि संसार की दृष्टि में लैला असुन्दर थी, किन्तु मजनूँ की दृष्टि में सुन्दर! यही 'विश्वास' है।

३. **प्रेम**–अर्थात् जिसके बिना क्षण भर भी न रह सके, जिसके क्षण-मात्र के वियोग से प्राणों में छटपटाहट हो और छटपटाहट भी इतनी हो कि ऐसा प्रतीत हो कि मृत्यु हो जाएगी–ऐसे प्रगाढ़ '**प्रेम**' में विपत्ति और स्वार्थ की गन्ध भी नहीं रहती। प्रेमी अपनी प्रेमिका के लिए प्राण तक देने को तैयार रहता है, किन्तु बदले में कुछ लेना नहीं चाहता। रास्ते की भयङ्करता को भी वह नहीं देखता, मिलन हेतु दौड़ता ही जाता है, भले ही उसे कुछ भी सहना पड़े। कहा भी है--'**प्रेम का पन्थ कराल महा, तलवार की धार पै धावनो है!**'

'प्रेम' के लिए एक तो '**प्रेमी**' स्वयं है और दूसरा उसका '**प्रेम-पात्र**'। तीसरा कोई नहीं होता। ऐसे '**प्रेम**' का होना ही सबसे बड़ा '**वैराग्य**' है। '**पूर्ण प्रेम**' के उदय होने पर कोई कर्म शेष नहीं रहता। ऐसा '**प्रेम**' होता कैसे है, इस विषय में '**भक्ति-रसामृत-सिन्धु**' का कहना है–

आदौ श्रद्धा ततः साधु-सङ्गोऽथ भजन-क्रिया। ततोऽनर्थ-निवृत्तिः स्यात्, ततो निष्ठा रुचिस्ततः।।
अथासक्तिस्ततो भावस्ततः प्रेमाभ्युदञ्चति। साधकानामयं प्रेम्णः, प्रादुर्भावे भवेत् क्रमः।।

अर्थात् पहले '**श्रद्धा**', तब '**साधु-सङ्ग**', फिर '**भजन-क्रिया**', तब अनर्थों की '**निवृत्ति**', उसके बाद '**निष्ठा**', फिर '**रुचि**', फिर '**आसक्ति**', तब '**भाव**' और सबसे अन्त में '**प्रेम**' होता है।

४. **श्रद्धा**–'**श्रद्धा**' की व्याख्या में **सन्त कबीर** ने कहा है–

कबिरा जाके मुखन ते, धोखेहूँ निकसे राम। ताके पग की पानही, मेरे तन का चाम।।

राम का नाम जो धोखे से भी ले ले, उसके प्रति ऐसी भावना रखना कितना कठिन है! इस प्रकार की भावना अपने '**इष्ट**' के प्रति रखना ही वास्तविक '**श्रद्धा**' है।

'**जप**' के लिए दो विधान आवश्यक हैं–**१. दृष्टि-परिवर्तन, २. नामापराध से बचना**। जो '**जप-साधन**' करता है, उसकी दृष्टि-बुरी नहीं होनी चाहिए। वह बुरे वातावरण की शिकायत नहीं करता है। निम्न बातों का अभ्यास नित्य करने से दृष्टि परिवर्तित होती है।

(क) **कोई भी पूर्णतः बुरा नहीं** है। सभी में कुछ-न-कुछ अच्छाई है ही। तब उसकी अच्छाई को ही देखने की चेष्टा करें। उसके बुरे स्वभाव से अपनी दृष्टि को हटा लें। अच्छी ही बात देखनेवाले इस स्वभाव की ही वृद्धि करें। यह उपाय बुरा देखने के स्वभाव को सहज ही नष्ट कर देता है।

(ख) बड़ा-सा-बड़ा दुष्ट भी सुधर कर सन्त बन सकता है, इस ऐतिहासिक तथ्य को अच्छी तरह स्मरण रखें। **आन्तरिक रूप से कोई दुष्ट नहीं है**। यदि दुष्ट को किसी सन्त के पास रख दिया जाए, तो उसकी दुष्टता निश्चय ही नष्ट हो जाएगी। अतः **दुष्टता से घृणा करें**, किन्तु दुष्ट से नहीं।

(ग) स्मरण रखें कि **ईश्वर ही स्वयं दुष्ट, चोर, लम्पट** और **वेश्या** का कार्य कर रहे हैं क्योंकि सभी की '**आत्मा**'–**परमात्मा** का ही तो अंश है। इस प्रकार **दुष्टता** आदि **ईश्वर-लीला** है–'**लोक-वत् तु लीला-कैवल्यम्**।' इस भावना से यदि किसी दुष्ट को देखा जाए, तो उससे भी भक्ति ही उमड़ेगी।

(घ) सभी बातों में '**आत्म-दृष्टि**' रखें। सभी में **नारायण** को देखने का अभ्यास करें–'**वासुदेवः सर्वमिति**'–**गीता**। **भगवान्** की उपस्थिति का अनुभव सर्वत्र करें। इस प्रकार '**श्रद्धा**' का भाव सहज ही अर्जित कर सकते हैं।

मनन करने योग्य बातें

'मन्त्र' एक प्रकार की शक्ति है, जिसका प्रयोग किसी भी दशा में, किसी भी रूप में सम्भव है। मानव जीवन की रक्षा और दूसरे चमत्कारी कर्म 'मन्त्र' के प्रभाव से सम्पन्न हो सकते हैं।

❀ ❀ ❀

'मन्त्र'–शब्द-ब्रह्म का प्रकट स्वरूप है। इस प्रसङ्ग में यह जानना आवश्यक है कि शब्द है क्या? 'शब्द'–आकाश का गुण है और श्रवणेन्द्रिय से वह अनुभव में आता है।

❀ ❀ ❀

वाक्–रूप में प्रकट होनेवाला 'वर्णात्मक शब्द'–नित्य सनातन है।

❀ ❀ ❀

'वर्णात्मक शब्द'–मानसिक क्रिया या भावना के अनुरूप निर्मित 'ध्वनि' के माध्यम से प्रकट होता है।

❀ ❀ ❀

'वर्णात्मक शब्द' के चार रूप हैं–१. परा, २. पश्यन्ती, ३. मध्यमा और ४. वैखरी।

❀ ❀ ❀

'परा'-शब्द–शरीर के 'मूलाधार-चक्र' में कुण्डलिनी में अवस्थित है।

❀ ❀ ❀

'पश्यन्ती'-शब्द की स्थिति–'मूलाधार-चक्र' से 'मणिपुर-चक्र' तक व्याप्त है।

❀ ❀ ❀

'मणिपुर-चक्र' से लेकर हृदय तक शब्द के 'मध्यमा'-रूप की अनुभूति होती है।

❀ ❀ ❀

'मध्यमा' के बाद 'शब्द' अपने अन्तिम रूप 'वैखरी' में प्रकट होता है, जो उच्चारित वाक्–रूप है।

❀ ❀ ❀

'शब्द' का 'मध्यमा'-रूप–मानसिक क्रिया या भावना है, जिससे प्रेरणा पाकर 'शब्द' के 'वैखरी'-रूप या 'वाणी' की उत्पत्ति होती है।

❀ ❀ ❀

'मध्यमा' और 'वैखरी'-रूपों को मूल प्रेरणा 'शब्द' के 'पश्यन्ती' रूप से मिलती है, जो और कुछ नहीं, 'परा-शब्द' की सामान्य क्रिया-रूपी अवस्था है।

❀ ❀ ❀

'परा'-शब्द यदि 'सुषुप्ति' है, तो 'मध्यमा'-शब्द–'स्वप्न' है और 'वैखरी'-शब्द है– 'जाग्रदवस्था'।

❀ ❀ ❀

'शब्द' और 'अर्थ' में अखण्ड सम्बन्ध है। अर्थ-हीन कोई 'शब्द' नहीं होता और शब्द-हीन कोई 'अर्थ' नहीं होता।

❀ ❀ ❀

ॐकार का अनुभूत जप

('ॐकारोपासना' अथवा 'प्रणवोपासना' की एक अनुभूत योजना)

ॐकारं विन्दु-संयुक्तं, नित्यं ध्यायन्ति योगिनः। कामदं मोक्षदं चैव, ओङ्काराय नमो नमः।।

- मनुष्य की **सुख-शान्ति** और **कल्याण** के लिए हमारे पूर्वजों ने सैकड़ों साधन और योजनाएँ तैयार करके शास्त्रों में सुरक्षित रूप से लिख दी हैं, जिनको मनुष्य ध्यान-पूर्वक सुन कर, पढ़ कर और मनन कर **आध्यात्मिक सुख-शान्ति** और **कल्याण** को प्राप्त कर सकता है। उनकी **उपासना** अर्थात् जप **की विधि-वेद, उपनिषद्, गीता, तन्त्र, पुराण** और **धर्म-शास्त्र** में कही गई है। इन विधि-विधानों के साथ ही इनके माहात्म्य का भी विशेष कथन किया गया है, जिसको पाठक यत्र-तत्र यदा-कदा पढ़ते, सुनते और देखते ही रहते हैं।
- **'ॐ'-जगत् की आध्यात्मिक और भौतिक शक्तियों का मौखिक वीज-तत्त्व** है। अतः यह मनुष्य की **आध्यात्मिक सुख-शान्ति** और **कल्याण** की ओर उन्नति का कारण है।
- जिस समय **'ब्रह्म'** का विकास हुआ था, उसके प्रथम विकास का नाम ही **'ॐ'** कहा गया है। इस विकास का अपने-पन में लय हो जाना ही उन्नति की परा-काष्ठा है।
- **'ब्रह्म'** के विकास का **'प्रणव' (ॐ)** के रूप में आकर, इन्द्रिय आदि के विकास में विकसित हो जाना ही भौतिक उन्नति की परा-काष्ठा है।
- **'प्राणों'** का **'पूर्ण-ब्रह्म'** में लय हो जाना **'ब्रह्माद्वैत'** की सिद्धि है और **'प्रणव' (ॐ)** का पूरे व्यवहार में विकसित हो जाना **'पूर्ण-ब्रह्माद्वैत'** की सिद्धि है। इन दोनों की पूर्णता में **जगदाभास का अभाव** हो जाता है।
- **'आध्यात्मिक लय'** में साधक जगत् को मन-ही-मन **'ब्रह्म'** में लय करता है और वह जगत् में **'ब्रह्म-मय'** होकर रहता है। इसी को **अध्यात्म** में **'ॐ एवेदं सर्वं वेद नास्ति किञ्चन्'** की सिद्धि कहते हैं और भौतिक जगत् में **'सर्वं खल्विदं ब्रह्म'** का दर्शन होने लगता है। यही **'ॐकारोपासना' का सार तत्त्व** है।

ओङ्कारोपासना—भ्रम-निवारण

- शास्त्रों में **'ॐकारोपासना'** के प्रकरण में लिखा है कि जो साधक **बारह मास तक साढ़े बारह हजार 'ॐ'** का जप करता है, उसको **बारह महीने में 'आत्म-साक्षात्कार'** हो जाता है। कोई-कोई कहते हैं कि बारह महीने में नहीं, बारह साल में **'आत्म-साक्षात्कार'** होता है। कोई अन्य भी कई कल्पनाएँ किया करते हैं।
- जैसे **'काल'** के सम्बन्ध में मत-भेद है, वैसे ही **'जप'** के विषय में भी नाना मत-भेद हैं। कितनों ही का कहना है कि **कलि-युग** के प्रभाव से **'मन्त्र-शक्ति'** और **'जापक-शक्ति'** निर्बल पड़ गई है। इनको

सबल बनाने के लिए 'मन्त्रों' का तिगुना जप करना चाहिए। कोई कहता है कि कलि-युग में 'मन्त्र' और 'जप'–दोनों अशुद्ध-अपवित्र हो जाने से फल-रहित हो गए हैं, अतः उनसे साधक को फल नहीं मिलता। उपर्युक्त सभी बातें काल्पनिक, अन्ध-विश्वास और हताश-वृत्ति की गढ़ी हुई हैं। 'जप-परम्परा' के लोप हो जाने से ही इस प्रकार की भ्रान्तियाँ निर्मित हुई हैं और 'जप की परम्परा' मिल जाने से ये सभी भ्रान्तियाँ मिट जाती हैं।

भ्रम-रहित 'जप' का पूर्ण अनुष्ठान

- शास्त्रोक्त '**विधि**' के अनुसार '**प्रणव**'(ॐ) के जप का एक अनुष्ठान **साढ़े बारह हजार दैनिक** होता है। इसके अनुसार **सवा कोटि जप** का पूर्ण प्रयोग **दो वर्ष नौ मास** में पूर्ण होता है। इस जप की **साढ़े बारह हजार दैनिक संख्या** को पूर्ण करने के लिए **तीन घण्टे बीस मिनट** लगते हैं। इसमें से **तीन हजार एक सौ पचीस** जप को '**जिह्वा**' के दबाव से करना होता है, जिसमें **पचास मिनट** का समय लगता है। दूसरा भाग **तीन हजार एक सौ पचीस** जप को '**कण्ठ**' के दबाव से करना होता है, जिसमें भी उतना ही समय लगना चाहिए। तीसरा भाग इसी संख्या का '**हृदय**' के दबाव से और चौथा भाग '**नाभि**'-**गत प्राण-मात्र की स्फूर्ति** से हुआ करता है। यही '**जप**' की अनुभूत योजना है।

जप की विस्तृत अनुभूत योजना

- **साढ़े बारह हजार 'ॐ' के जप** की जो अनुभूत योजना यहाँ बताई जा रही है, उसे प्रस्तुत विधि के अनुसार पूर्ण करने से नियत समय पर '**आत्म-साक्षात्कार**' होता है।

'वैखरी' का जप एवं उसकी विधि

- '**जप**' में लगने के पहले '**ॐ**' के **साढ़े बारह हजार जप** को चार भागों में बाँट लेना चाहिए। अर्थात् पूरे जप को **तीन हजार एक सौ पचीस** की संख्या में चार बार में करना चाहिए।
- पहले भाग को '**वैखरी**'-वाणी से जपना चाहिए। '**वैखरी**' का अर्थ बिखर जानेवाली वाणी है। जिस समय वक्ता '**वैखरी**' से बोलता है, उस समय उसका शब्द मुख से बाहर आकर बिखर जाता है अर्थात् इसकी गति बहिर्मुख हो जाती है, जिसके कारण **वाणी का अन्तः**-प्रवाह बिल्कुल बन्द हो जाता है। वह अन्दर से निकल कर बाहर ही फिंकने लगती है। '**वैखरी**' **के जप का अर्थ है–वाणी के बाहरी प्रवाह को अन्तर्प्रवाह में परिवर्तित कर देना।**
- '**वैखरी**' के जप के समय इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि उच्चारित '**ॐ**'-शब्द के प्रवाह-कम्पन मुख-द्वार से बाहर को नहीं बहें। उच्चारित '**ओम-ध्वनि**' जब बाहर के प्रवाह को छोड़कर शब्द-तन्तुओं द्वारा कण्ठ-छिद्र में जाकर '**विशुद्ध-चक्र**' के वाक्-कम्पनों को सञ्चालित करके प्रवाहित

होने लगती है, तब साधक को अपने होठों को बिल्कुल बन्द करके **'वैखरी'**-गत शब्द-तन्तुओं से **'ओम्'** की ध्वनि को **घण्टा-नाद**-वत् बड़े बल-पूर्वक उच्चारित करना चाहिए, जिससे वह शब्द-समूह ओठों से टकराकर **मध्यमा**-गत वाक्-तन्तुओं को झङ्कारित करने लगे। इन वाक्-तन्तुओं के ध्वनित होते ही **'वैखरी-जप'** पूर्णता को प्राप्त हो जाता है। अर्थात् **'वैखरी'**–**'मध्यमा'** में लय हो जाती है। इसे पूर्ण करने में **पचास मिनट** लगते हैं। इस **'जप'** की स्थिति में **मन की चञ्चलता** का बिल्कुल ह्रास हो जाता है। जो लोग मन के रोकने में हताश हो गए हों, वे इस अनुभूत विधि से लाभ उठा सकते हैं।

'मध्यमा' की जप-विधि

- **सङ्गीत-विज्ञान** के अनुसार वस्तु पर पड़े हुए आघात–प्रत्याघात के साथ ही आघातित वस्तु के कण-कण में पहुँच जाते हैं, तथापि कम्पनों का आरम्भ केन्द्रीय आघात-स्थान ही होता है। इस नियम के अनुसार बोली का आरम्भ–**'परा'** से और **'जप'** का आरम्भ–**'वैखरी'** से माना जाता है।
- **'परा'** के कम्पनों से–**'वैखरी'** का कार्य और **'वैखरी'** के कम्पनों से–**'परा'** का कार्य प्रारम्भ हुआ करता है। बिखरनेवाली जगह का नाम–**'वैखरी'** और लयवाली जगह का नाम–**'परा'** कहा जाता है। दूसरे शब्दों में, बहिर्गत कम्पनों का नाम–**'वैखरी'** बोली और लय-गत कम्पनों का नाम–**'परा-जप'** कहा जाता है। बोली की पूर्ति के लिए **'परा'** के कम्पनों को **'वैखरी'** में लाना पड़ता है और **'जप'** की पूर्ति के लिए **'वैखरी'** के कम्पनों को **'परा'** में लय करना पड़ता है।
- जब तक **'वैखरी'** के कम्पन विखरना बन्द करके **मध्यमा** में लय नहीं होते, तब तक **जप** नहीं–**जपाभास** ही हुआ करता है। **जप की सिद्धि–शुद्ध 'जप'** से होती है, **जपाभास** से नहीं।
- **शुद्ध जप** के प्रारम्भ होते ही **'वैखरी'** के कम्पन **'मध्यमा'** में लय होने लगते हैं। जैसे-जैसे **'वैखरी'** के कम्पन–**'मध्यमा'** में लय होते है, वैसे-वैसे ही साधक के लिए **वैखरी-जन्य जप**–अरोचक, निस्सार, नीरस होकर साधक **मध्यमा-जन्य जप** की मधुरता का रसास्वादन करने लगता है और थोड़े ही समय में साधक की **'वैखरी'** के कम्पन–**'मध्यमा'** के स्वर-तन्तु की सुमधुर ध्वनि से **'ओम्'** के रूप में गुञ्जित होने लगते हैं।
- जिस समय साधक के **वैखरी** के कम्पन–**मध्यमा** में लय होकर **'ओम्'** के रूप में गुञ्जायमान होने लगते हैं, उस समय साधक को बड़ी सावधानी-पूर्वक **जालन्धर-बन्ध** लगा कर एकाग्रता से जप में मनोलय-पूर्वक लग जाना चाहिए, जिससे **मध्यमा-जन्य ध्वनि** कण्ठ से टकरा कर **हृत्**-कमल की ओर प्रवाहित होने लगे और स्वर-तन्तु **'अनहद'** की ओर प्रवाहित होने लगें। ऐसा होना ही **'मध्यमा'** के **जप की पूर्ति** कहलाता है।

'पश्यन्ती' की जप-विधि

- जब 'वैखरी' के कम्पनों का '**मध्यमा**' में पूर्णतया लय हो जाता है, तब **वाक्-शक्ति** के स्वर-तन्तु '**मध्यमा**' में स्वतः विकसित होने लगते हैं।
- जैसे **ध्वनि से अक्षर** और **अक्षर से बोली** बनती है, वैसे ही **बोली का अक्षर** में और **अक्षर का ध्वनि** में लय हुआ करता है। '**बोली**' से '**अक्षर**' अधिक महत्त्व का है और '**अक्षर**' से '**ध्वनि**' अधिक महत्त्व की है। जब साधक की बोली अक्षरात्मक होकर पूर्ण-तया '**ध्वनि**' के रूप में परिवर्तित हो जाती है, तब '**पश्यन्ती**' का **जप** पूर्णता को प्राप्त होता है। इस स्थिति में साधक का **अन्तर्लय** हो जाता है और उसका **हृत्-बन्ध** होने लगता है। वैसे भी **जालन्धर-बन्ध** के पूर्णतया लग जाने पर **हृत्-बन्ध** सुगम हो जाता है। इस बन्ध के पूर्ण होने पर '**पश्यन्ती' का जप** भी पूर्ण हो जाता है। इस जप के पूर्ण हो जाने पर वाणी का प्रवाह '**मध्यमा**' की ओर से बिल्कुल बन्द होकर '**परा**' की ओर प्रवाहित होने लगता है, जो किसी **भाग्यवान् साधक** को ही सुलभ होता है।

'परा' का जप

- '**पश्यन्ती**' के जप की पूर्णता से ही साधक को '**परा**' के जप का अधिकार प्राप्त होता है। जैसे '**वैखरी**' के जप का अर्थ बोली को अक्षर में लय करना है, '**मध्यमा**' के जप का अर्थ अक्षरों को कम्पनों में लय करना और '**पश्यन्ती**' का अर्थ कम्पनों को उनकी मूल-शक्ति में लय करना है, वैसे ही '**परा**' का जप– **वाक्-शक्ति** को **ब्रह्म-निर्देश-तत्त्व** में लय करना है।
- मूल-शक्ति में दो तत्त्व रहते हैं–**१. वाक्-तत्त्व, २. ब्रह्म-निर्देश-तत्त्व। वाक्-तत्त्व को ब्रह्म-निर्देश-तत्त्व** में लय कर देना ही **पश्यन्ती के जप की पूर्णता** होती है। इसे यों भी कह सकते हैं कि **ब्रह्म-निर्देश-तत्त्व** को **वाक्-तत्त्व** से रहित कर देना ही **पश्यन्ती के जप की परा-काष्ठा** या **परा-गति** है। इस जप के सिद्ध हो जाने पर साधक की **वाक्-शक्ति** वाक्-तत्त्व को छोड़ कर **परमात्मा का निर्देश** मात्र रह जाती है।
- '**सकार**'–**प्राण-जीव** से '**हकार**'–**शिव** होना ही **ओङ्कार के जप की प्रति-ध्वनि है। प्राण से प्रणव** होना ही मनुष्य के मनुष्यत्व का लक्षण है। ये **वाक्-चतुष्टय** के **प्रणव** की बाह्य और अन्तर ध्वनि हैं। इसे **प्रति-ध्वनि** का रूप देना ही **जप का तात्त्विक स्वरूप** है। विज्ञान के सिद्धान्त में ध्वनीय प्रति-ध्वनीय होकर अपने मूल-तत्त्व में लय पाती है। ध्वनि को प्रति-ध्वनि (के कारण) में लय कर देना ही **जप का दिव्य तत्त्व** है। इसे योग में '**उलटी गति**' कहते है। **कीजिए** और **प्रकाश-मय** होइए। यह **अकार, उकार, मकार** और **नाद का सार** कहा गया है। इसके आगे **नाद, बिन्दु, कला** और **अतीत का बोध** साधक को स्वयं ही हो जाएगा और साधक के मुखारविन्द से स्वतः ही निकलने लगता है– '**स जीवः केवल शिवः।**'

'मन्त्र-विद्या', सङ्गीत, साहित्य के भौतिक परिणाम

- **रसायन-शास्त्र** का एक अध्यापक जब **सङ्गीत का प्रभाव** रासायनिक क्रियाओं पर और पौधों के बीजों पर, जड़-जन्य वस्तुओं पर देखता है और लोगों को बताता है, तो बहुतों को अचम्भा होता है। मेरे मित्र मुझसे प्रायः पूछते हैं कि– 'आपको रासायनिक क्रियाओं, पेड़-पौधों, जड़-जन्य वस्तुओं पर **मन्त्र-विद्या, सङ्गीत** के प्रभाव की कल्पना किस प्रकार सूझी तथा आपका शोध-कार्य कैसा चल रहा है?
- **महा-भारत** के काल से कथाएँ गूँजती हैं कि **कौरव-पाण्डव** के उस महा-युद्ध में '**नारायणास्त्र**', '**पाशुपतास्त्र**', '**पर्जन्यास्त्र**' आदि का उपयोग **मन्त्र-विद्या** के द्वारा किया गया था। **शङ्कर** जी का **डमरू, सरस्वती** की **वीणा, नारद** की **इकतारी** आदि की प्रशंसा पुराणों में हम पढ़ते ही हैं। **कृष्ण कन्हैया** की **मुरली** की धुन से वृन्दावन की **गोपियाँ** मोहित रहती थीं। **अकबर** के काल में सङ्गीत-सम्राट **तानसेन** ने **मल्हार-रागिनी** छेड़कर रिमझिम वर्षा करा दी और दीपक राग से दिए जगमगा दिए।
- हमारे **महर्षियों** ने **वेद, उप-वेद, षट्-शास्त्र, चौदह विद्याओं** और **चौंसठ कलाओं** का ज्ञान संग्रहीत किया है। यह ज्ञान चार प्रकार का है– **१. धर्म-शास्त्र, २. अर्थ-शास्त्र, ३. काम या कला-शास्त्र** और **४. मोक्ष-शास्त्र**। उनका दावा है कि ज्ञान, विज्ञान और विद्याओं तथा कलाओं का अन्तिम लक्ष्य '**मोक्ष**' प्राप्त करना ही है। '**मोक्ष**'-शब्द मुच् धातु से बना है। मुच् अर्थात् मुक्त होना, सङ्कट से मुक्त होना, प्रपञ्च के झंझटों से अलग होना, किसी भी विद्या के द्वारा ज्ञान, कला, विज्ञान से अपना हेतु सिद्ध करना, अपना सङ्कट दूर करना, सुखी रहना आदि–यही अर्थ है।
- **वात्स्यायन काम-सूत्र** में **चौंसठ कलाओं** के अन्तर्गत **सात ललित कलाएँ** प्रमुख मानी गई हैं– **१. स्थापत्य, २. शिल्प, ३. मूर्त्ति, ४. चित्र, ५. नाटक, ६. सङ्गीत** और **७. साहित्य**। इन **ललित कलाओं** से सत्य का आविष्कार चतुराई से, सुन्दरता से अभिव्यक्त होता है। '**ललित**' वह सौन्दर्य है, जिससे चित्त को मधुर गुदगुदी होती है। '**काम-शास्त्र**' का मूल '**साम-वेद**' है। **गान्धर्व वेद, धनुर्वेद** के अन्तर्गत सम्पूर्ण कला-साहित्य है।
- '**मन्त्र-विद्या**' और **सङ्गीत** की उत्पत्ति–'**नाद**' से होती है। जब कोई वस्तु हिलती है और किसी वस्तु या पदार्थ को हिलाती है, तब **स्पन्दन, कम्पन** और **आन्दोलन** उत्पन्न होते हैं। इसी **अव्यक्त कम्पन-समूह** को '**नाद**' कहते हैं। कानों से सुनाई देनेवाले '**नाद**' को '**श्रव्य**' कहते हैं। जीव-जन्तुओं के व्यक्त उच्चारण-कम्पनों से '**शब्द**' बनते हैं और जड़-जन्य में उत्पन्न होनेवाले व्यक्त कम्पनों को '**ध्वनि**' कहते हैं। अचूक रीति से इस '**श्रव्य**' कम्पन का आकलन करना '**श्रुति**' कहलाता है। '**श्रुति**' से '**स्वर-व्यञ्जन**' बनते हैं। '**सङ्गीत-दर्पण**' में बताया है कि–

दम् नादेन व्यजते वर्णः। पदं वर्णात्, पदात् वचः, वचसो व्यवहारोऽयं नादादर्थम् । अतो जगत्।

अर्थात् '**नाद**' के योग से **स्वर-व्यञ्जन** अक्षरों का उच्चारण होता है। '**स्वर-व्यञ्जन**' से '**पद**' अर्थात् शब्द बनता है। '**शब्द-समूह**' से '**वच्**' अर्थात् '**भाषा**' बनती है। '**भाषा**' होने से जगत् के व्यवहार

चलते हैं। इसलिए यह सम्पूर्ण जगत् 'नाद-ध्वनि' ही है। 'वाक्य'-भाषा का भाग है और वाक्यों को नियमित रूप से अर्थ-सहित रखना ही 'वाङ्मय' है। चतुराई से बना हुआ भावना-मय 'वाङ्मय'-'साहित्य' कहलाता है।

- व्यक्त 'नाद' से शब्द-समूह, उससे भाषा, वाङ्मय और साहित्य उत्पन्न होता है। पातञ्जलि ने 'भाषा' का लक्षण बहुत रोचक बताया है। अग्नि देव के उपासक जिस ऋचा के द्वारा अग्नि की स्तुति करते हैं, उसी ऋचा में पतञ्जलि को 'भाषा' के लक्षण दिखाई देते हैं! यथा–

चत्वारि श्रृङ्गा, त्रयो अस्य पादा। द्वे शीर्षे, सप्त-हस्तासो अस्य। त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महा-देवो मर्त्या आविवेश।

अर्थात् १. नाम, २. नाम का विस्तार, ३. क्रिया-पद, ४. क्रिया का विस्तार–ये चार मुख्य 'श्रृङ्ग' (सींगें) हैं। १. भूत, २. वर्तमान, ३. भविष्य–ये तीन काल ही तीन पाद (पैर) हैं। १. ध्वनि और २. अर्थ–ये दो ऊँचे स्कन्ध हैं। सात विभक्तियाँ ही सात हाथ हैं। त्रिधा बद्धो = १. हृदय, २. कण्ठ, ३. मूर्ध्नि। इस प्रकार से बना हुआ 'शब्द-समूह-रूपी' वृषभ देव–वैखरी–रूप से शब्द करके बाहर आता है। इस व्याकरण के अनुसार शब्दानुशासन से अर्थात् 'शब्द' के नियमों से बने हुए 'वाक्य' मनो-रूपी छन्नी से छनकर कुशलता से जब सौन्दर्य-रूप धारण करते हैं, तब उस वाङ्मय को 'साहित्य' या 'काव्य-कला-कृति' कहते हैं।

- अभिव्यक्ति में सौन्दर्य का सर्जन करने के लिए 'कला' का अवतार हुआ और 'कला' ने अपना ललित सहयोग देकर, जब वाचिक अभिव्यक्ति को आकर्षक, मोहक तथा प्रभावशाली बनाया, तब उस अभिव्यक्ति का नाम 'साहित्य' हुआ, जिसका भावना-मय परिणाम शरीर और मन पर होता है।
- 'साहित्य' की उत्पति 'वाङ्मय' से, वाक्य-समूह की 'शब्द' से और शब्द की जीव-जन्य से निकली श्रव्य-ध्वनि से होती है अर्थात् 'ध्वनि' का भौतिक परिणाम ही 'साहित्य' द्वारा अखिल जगत् पर प्रभावी होता है। इससे सिद्ध होता है कि 'ध्वनि-विज्ञान' के अन्तर्गत 'साहित्य' का समावेश 'ध्वनि' के भौतिक परिणाम के रूप में है।

गीतम् वादात्मकम्, वाद्यं दान-व्यक्त्या प्रशस्यसे, तत् अवयवानुगतम् नृत्यम् ।

अर्थात् 'गीत' या गेय साहित्य–'नाद' पर अवलम्बित है। 'वाद्य' या सङ्गीतात्मक ध्वनि उत्पन्न करनेवाला मन्त्र 'नाद-उत्पन्न-कर्त्ता' पर अवलम्बित है और 'नृत्य' इन दोनों के आधार पर होता है। इसलिए पूरा 'सङ्गीत'–नाद के द्वारा होनेवाले 'कम्प' या 'आन्दोलन' पर ही आधारित है। 'सङ्गीत-नाद' की विशेषता है–मन का रञ्जन या मधुरता। कहा भी है–'गीत-वादित्र- नृत्यानाम् रक्ति साधारणो गुणः।'

- 'नाद' के दो प्रकार होते हैं–१. आहत और २. अनाहत। 'अनाहत-नाद'–सङ्कट-मोचक और मुक्ति-दायक होता है, लेकिन वह मन-रञ्जक नहीं है। इसी नाद से 'मन्त्र-विद्या' बनी है। 'अनाहत नाद' तथा 'मन्त्र-विद्या' को सिद्ध करने के लिए गुरु द्वारा बताए गए मार्ग के अनुसार चलना पड़ता है।

✦ आहत-नाद–'मन-रञ्जक' और 'भव-भञ्जक' दोनों ही हैं। आहत-नाद से ही व्यवहार में 'ध्वनि' इत्यादि स्वर-ग्राम, मूर्धना, घाटादिक से राग-रागिनियाँ बनकर मनोरञ्जन होता है। गीत की महिमा अपार है। हृदय, कण्ठ और मूर्ध्नि से 'नाद' निकलता है। मध्य तार-स्वर में 'मन्त्र' खेलता है। श्रव्य 'नाद' के एक सप्तक में ६६ श्रुतियाँ होती हैं। सङ्गीत में बाइस सूक्ष्म ध्वनियाँ मानी गई हैं और वे सभी 'मन' पर प्रभाव डालती हैं। इन बाइस श्रुतियों में ठप्पे होते हैं, जो 'स्वर' कहलाते हैं। 'स्वर', स्वयं मधुर होकर मनोरञ्जन करता है। झङ्कार-युक्त रञ्जनात्मक 'श्रुति' ही 'स्वर' बनती है। उदाहरणार्थ, 'मालन्धरा' और 'भीम-पलासी' दोनों में कोमल-निषाद 'स्वर' होता है। 'मालकंस' निषाद-क्षोभिणी-श्रुति पर उस 'श्रुति' को निषाद बनाती है और 'भीम-पलासी' में तीव्रा श्रुति-कोमल निषाद स्वर कहलाती है अर्थात् 'मालकंस' में क्षोभिणी श्रुति और 'भीम-पलासी' में तीव्रा श्रुति-'स्वर' होकर मधुर लगती है। इन श्रुतियों में बदल होने से वे राग बे-सुरे और क्लिष्ट प्रतीत होंगे।

✦ मूलाधार चक्र से दो अंगुल ऊपर 'अग्नि-शिखा' नाम की नाड़ी है, जो 'ब्रह्म-ग्रन्थि' कहलाती है। उससे बहनेवाले प्राण-वायु चलायमान होकर धीरे-धीरे ऊँचा होता है और कण्ठ से षड्-वाक्य स्वरों द्वारा बाहर आता है। स्वरों के इस समूह को 'ग्राम्य' कहते हैं। इसके क्रमशः आरोह, अवरोह, मूर्छना या थाट होते हैं।

✦ 'याज्ञवल्क्य-संहिता' और 'नारद-संहिता' में प्राणियों की बोली में स्वरों का पृथक्-करण बताया गया है। मोर–'षड्-स्वर' में, गाय-चातक 'ऋषभ-स्वर' में, बकरा–'गन्धार-स्वर' में, क्रौञ्च–'मध्यम स्वर' में, कोयल–'पञ्चम स्वर' में, मेढक या घोड़ा–'धैवत-स्वर' में और हाथी–'निषाद-स्वर' में बोलता है। इसमें भी और सूक्ष्म निरीक्षण यहाँ तक है कि वसन्त ऋतु में जब कलिका खिलती है, उस समय की कोयल की कूक पञ्चम होती है। अंकुश से आघात करने पर हाथी 'निषाद-स्वर' से चिल्लाता है। इसके अतिरिक्त षड्-ऋतुओं के छः स्वर 'रे-ग-म-प-ध-नी' माने गए हैं।

✦ स्वरों का रस-विभाजन भी दिया है। षड्ज, ऋषभ–अद्भुत और वीर-रसात्मक। गन्धार और निषाद–करुण-रसात्मक, मध्यम–हास्य, पञ्चम–शृङ्गार और धैवत–भयानक तथा वीभत्स रस होते हैं। इसका अनुभव बुद्धि को जँचता है। बकरे का बलिदान होते समय, उसकी चीख 'गन्धार-स्वर' की कारुण्य-मय होती है। 'पञ्चम' स्वर का लालित्य वसन्तागमन में कोयल की कूक से ज्ञात होता है। अंकुश द्वारा पीड़ित हाथी 'निषाद-स्वर' में कारुण्य की अनुभूति कराता है।

✦ पण्डितों ने राग-रागिनियों की व्याख्या की है– 'योऽयं ध्वनि-विशेषस्तु, स्वर-वर्ण-विभूषितः। रञ्जको जन-चित्तानाम्, स रागः कथितो बुधैः–अर्थात् वह ध्वनि-विशेष, जो स्वर तथा वर्ण से मण्डित है और जो सर्व-साधारण का मन-रञ्जन करती है, उसे 'राग' कहते हैं।

✦ शिव-मत, हनुमत्-मत, रागार्णव-मत से छः ऋतुओं के छः राग, उनकी भार्याएँ, पुत्र, पुत्र-वधू–ऐसा राग-रागिनियों का विस्तार दिया है। इनका भी रसात्मक विभाग है। करुण-रस-द्योतक

जोगिया, मालकंस, केदार, गौड-सारङ्ग, पीलू अल्हैया; शृङ्गार-रसात्मक वसन्त, विहाग, काफी देशी, देस; शान्त और भक्ति-रस-द्योतक भीम-पलासी, भैरव, मल्हार, वसन्त, पूरिया, गौरी जय-जयवन्ती, भैरवी आदि। राग-रागिनियों से रोग-निवारण होता है, ऐसा भी वर्णन मिलता है **हिण्डोल-राग**–सिर-दर्द, मोह तथा शोक-नाशक है, **भैरव**–से बुखार हटता है, **श्रीराग**–व्यग्र चित्त को शान्त करता है और लता-वनस्पति को नव-पल्लव देता है, **मालकंस**–से बेहोशी दूर होती है तथा डिस्टीरिया में लाभ होता है, **पूरिया**–रक्त-चाप में उपयुक्त है।

तात्पर्य यह कि **नाद-कम्प** मधुर मन-रञ्जन करते हुए भी जीवनीय उपयोग के हैं। **अनाहत-नाद** की ध्वनि, जिसमें अर्थ और मन-रञ्जन नहीं होता, मुक्ति-दायक होती है और सङ्कट का निवारण करती है। **ह्रीं, क्लीं, श्रीं, सौं** आदि बीजों की ध्वनि से **हृदय-पङ्कज–शक्तिमान्** तथा **क्रिया-शील** होते हैं। ऐसे **बीज-स्वर 'बलातिबला विद्या, कादि-हादि-सादि-विद्या', बाला-षोडशी-राज-राजेश्वरी-त्रिपुर-सुन्दरी'** आदि हैं। इसका रहस्य शब्दों में खोलना सम्भव नहीं है, तथापि इतना कहा जा सकता है कि सृष्टि में जो-जो प्रचण्ड हल-चल, गुञ्जन व सुरों की झम-झमात्मक पिण्ड-गोलाई दिखाई देती है, उसका उद्‌गम है–**आहत, अनाहत नाद** के श्रव्य स्वरूप में।

✦ **भावनात्मक साहित्य, रञ्जनात्मक सङ्गीत** और **क्रिया-शील मन्त्रों** के अनुभव पाने की कल्पना बहुत वर्षों से मेरे मन में सञ्चारित रही है। कपिल रसायन पर ध्वनियों की क्रिया जब सही निकली, तब पौधों के बीजों पर प्रयोग करना आरम्भ किया, उसमें सफलता मिली। इस कार्य के लिए राग-रागिनियों का संग्रह मुझे अनेक लोगों से मिला। जबलपुर के **डाक्टर** और **श्रीमती हर्षे** ने अपने कुछ टेप रिकार्ड मुझे दिए। केन्द्रीय सूचना-मन्त्री **डा॰ केसकर** की कृपा से कुछ राग-रागिनियों के रिकार्ड प्राप्त हुए। **'पद्म-विभूषण' उस्ताद अलाउद्दीन खाँ मैहरवालों** ने, ग्वालियर के **'पद्म-श्री' कृष्णराव पण्डित** और पूनावाले **मास्टर कृष्णा** आदि सङ्गीतज्ञों ने मुझे अपने गीत दिए। इन सबका मैं हृदय से आभारी हूँ।

✦ इस लेख के वाचकों से मेरी यह प्रार्थना है कि **शब्द-ध्वनि, भाषा-गीतों की स्वर-श्रुतियों, मन्त्रों के बीज–इनमें हानि-लाभ** करने की प्रचुर शक्ति है। इसलिए अपनी बोली में, अपने भाषण में, अपने लेख में, अपने गाने में और जपनेवाले 'मन्त्र' में बड़ी सावधानी, लगन, परिश्रम की आवश्यकता को समझें। मैने जो कुछ खोज की है, उससे यही सिद्ध होता है कि **ध्वनियों का क्रिया-शीलत्व** लाभ-दायक भी होता है और हानि-कारक भी।

मनन करने योग्य बातें

'मन्त्र'-शब्द–'मन्त्र गुप्त परि-भाषणे' धातु पर **'न्'** प्रत्यय लगाने से सिद्ध होता है। इसका अर्थ गोप्य अथवा रहस्य-पूर्ण विचार है।

मन्त्र-कल्पतरु

कौल-कल्पतरु पं० देवीदत्त शुक्ल

जिनकी प्रेरणा से 'मन्त्र-कल्पतरु' का संशोधित एवं परिवर्धित संस्करण प्रकाशित हो रहा है।

मन्त्रों की महत्ता

कौल-कल्पतरु
पं० देवीदत्त शुक्ल

मन्त्र-योग की महत्ता एवं कुछ विशेष बातें

कौल-कल्पतरु
पं० देवीदत्त शुक्ल

मन्त्रों की महत्ता

- जिन **मन्त्रों** को आज हम प्राय: काल्पनिक कहते हैं, वे किसी जमाने में **'जन-सेवा'** के साधन थे। **'रोग-निवारण'** से लेकर **'मोक्ष-प्राप्ति'** तक का कार्य **'मन्त्र'** ही करते थे। हम कह सकते हैं कि **भौतिक विज्ञान** का चमत्कार हम देख रहे हैं, देख सकते हैं, किन्तु इस **प्राचीन विज्ञान** से हमें कुछ भी लाभ नहीं हो रहा है। बात ठीक तो है, किन्तु इस **भौतिक विज्ञान** के विकास के लिए कितने व्यक्ति क्रिया-शील हैं, कितना पैसा खर्च किया जा रहा है, कितने परीक्षण किए जा रहे हैं और **'मन्त्र-शास्त्र'** जैसे विषय पर क्या प्रयत्न किए गए या किए जा रहे हैं?
- आज के विज्ञान के अनुसार **मन्त्रों में निहित ध्वनि** कोई महत्त्व नहीं रखती क्योंकि **श्रव्य ध्वनि** यदि डेढ़ सौ वर्षों तक निरन्तर उत्पन्न की जाए, तो उससे केवल एक प्याली पानी गरम करने योग्य ऊर्जा उत्पन्न हो सकती है; किन्तु **भारतीय मतानुसार** तो इस **श्रव्य ध्वनि** को **निम्न श्रेणी की ध्वनि** माना जाता है। सबसे अधिक **प्रभावशाली ध्वनि** तो केवल अनुभव की जाती है। **'मानसिक जप'** में होंठ नहीं हिलते। हमें श्वास में ही वह ध्वनि प्रस्फुटित होती अनुभव होती है। इसका स्पष्ट अर्थ यह है कि जो हमें अनुभव होता है; उस शब्द के लिए **'स्फोट'** आवश्यक होता है।
- **भारतीय सिद्धान्त**–**'शब्द'** को **'ब्रह्म'** का स्वरूप मानकर उसकी प्रतिष्ठा करता है तथा **'शब्द'** में **एक ही तन्मात्रा** है। शेष तत्त्वों में तन्मात्राओं का भार बढ़ता जाता है। **'मन्त्र-शास्त्र'** में **'आकाश-तत्त्व'** की साधना की जाती है और **'योग'** में **'वायु'** की। **योगी**–**'प्राण-वायु'** के द्वारा जिस **'कुण्डलिनी'** का जागरण करता है, उसी का जागरण **'मन्त्र के स्फोट'** से हो सकता है।
- **'मन्त्र-शास्त्र'** केवल **ध्वनि-विज्ञान** ही नहीं है, **भावना-विज्ञान** भी है। ध्वनि तो गुणित करनेवाली शक्ति है। मुख्यत: **'मन्त्र की भावना'** क्रिया-शील रहती है। **ध्वनि की तरङ्गें** क्रम से गमन करती हैं और **विचारों की चुम्बकीय शक्ति** (···) रूप में गमन करती हैं। अभ्यास करने पर दोनों की एक ही गति हो सकती है। **वेदों की ऋचाओं** के स्वर इसी क्रम की पुष्टि करते हैं।
- **ध्वनि-विज्ञान** की विशेषता अगर देखनी है, तो **सङ्गीत-शास्त्र** है, जिसके परीक्षण स्थावर और जङ्गम जगत् पर किए जा रहे हैं। पहले दीपक जलते थे। आज **गाएँ**–**'राग' से मुग्ध** होकर अधिक दूध देती हैं, **पेड़-पौधे**–जल्दी बढ़ते हैं अर्थात् शक्ति के उपयोगों में ही परिवर्तन हुआ है, मूल शक्ति तो अक्षुण्ण है तथा इन प्रयोगों से यह तो स्पष्ट हो ही जाता है कि इस माध्यम में **'शक्ति'** है।
- भारतीय परम्परानुसार **'वैखरी-वृत्ति'** से जो स्फोट होता है, वह अधिक शक्ति-शाली और प्रयत्न साध्य होता है। अत: मन्त्र का फार्मूला **शब्द+भावना-शक्ति = मन्त्र** होता है।
- सन्ध्या के समय में मन्दिरों में गूँजती वाद्यों की ध्वनि एक **भक्ति-भावना** का सञ्चार करती है, तो युद्ध के समय बजनेवाली बाजे की धुन **वीर-रस** का उद्दीपन करती है। मृत्यु के समय का सङ्गीत श्रोता के मन

में **करुणा का भाव** उत्पन्न करता है। यह है **ध्वनि का प्रभाव**, जो **अन्तर्राष्ट्रीय साम्य** है। इससे प्राणी-मात्र प्रभावित होता है।

- **'शब्द'** की दूसरी विशेषता **संवहनीयता** होती है। **'शब्द'** ठोस वस्तु के माध्यम से भी गमन कर सकता है। एक ठोस वस्तु को एक तरफ यदि ठोका जाए, तो वह ध्वनि दूसरी तरफ सुनी जा सकती है। रेल-गाड़ी के बहुत दूर रहने पर भी पटरियों में खट्-खट् की आवाज होने लगती है। इस सबका यह अर्थ होता है कि **'शब्द'** की शक्ति अपरिमेय होती है।
- पृथ्वी पर जितने परिवर्तन होते हैं, उनमें से बहुत से **'शब्द'** के द्वारा ही किए जाते हैं। इसके साथ ही यह भी सर्व-विदित है कि शक्ति के स्रोतों में **'शब्द'** भी **शक्ति का एक स्रोत है**। **भीषण 'शब्द'** से व्यक्ति भय-भीत हो जाता है, मकान धरा-शायी हो जाते हैं और **मधुर 'शब्द'** से हर कोई प्रसन्न हो जाता है।
- कभी-कभी हमारे कानों में किसी परिचित गाने का अथवा शब्दावली की गूँज का भान होता है, जब कि प्रत्यक्ष में उसका कारण कहीं भी नहीं रहता। इसका अर्थ यही नहीं है कि वह हमारा पूर्व-श्रुत अनुभव है, वरन् वह ध्वनि गूँज रही होती है और हमारे कान उसे ग्रहण कर लेते हैं। इसी तरह कई बार हमें अपरिचित स्वरों का भी भान होता है, किन्तु हम उन पर ध्यान नहीं देते क्योंकि हमारा उनका कोई पूर्व-सम्बन्ध नहीं रहता।
- **भारतीय विज्ञान** कहता है–**'यत्-पिण्डे, तद् ब्रह्माण्डे'**। किसी भी इन्द्रिय को प्रबल और विशुद्ध कर लेने पर वह प्रत्यक्ष और परोक्ष का ज्ञान कर लेने में समर्थ हो जाती है। यह अनुभव हमें **'शब्द'** की **शक्ति** का ज्ञान करा देता है।
- **विचारों के चुम्बकीय प्रवाह का परीक्षण** हमें होता रहता है। जैसे किसी सिंह की गुफा के पास जाने पर हमें स्वतः भय का भान होता है, रोमाञ्च हो उठता है। रात्रि में डाकुओं द्वारा आतङ्कित क्षेत्र में प्रवेश कर लेने पर मन में एक अनजानी आशङ्का छा जाती है। इस कथन में भी कि पहले ऋषियों की कुटिया में **'सिंह'** और **'मृग'** एक ही स्थान पर एक साथ पानी पीते थे, यही विचारों की ही विद्युत्-शक्ति प्रभावशाली रहती थी। किसी भी कुत्ते को हम यदि प्रेम से देखते हैं, तो वह पूँछ हिलाने लग जाता है और क्रोध से देखने पर गुर्राता है। इसमें भी उसी **वैचारिक विद्युत-शक्ति** का प्रवाह प्रभावी होता है।
- इस सबसे यह जाना और माना जा सकता है कि **'शब्द'** और **'विचार'** दोनों में एक प्रबल शक्ति रहती है तथा **मन्त्रों** में इन दोनों शक्तियों का समावेश रहता है।
- **भारतीय 'लिपि'** और **'अक्षर'**–पूर्णतः **वैज्ञानिक** हैं तथा उनकी ध्वनि में एक विशेष प्रकार का रहस्य छिपा हुआ है। मन्त्र में **'आस्था'** एक प्रबल और आवश्यक तत्त्व होता है, जिसके लिए लोग आना-कानी करते हैं। वैसे बिना **'आस्था'** के भी **मन्त्र-शक्ति** का अनुभव और प्रयोग किया जा सकता है, किन्तु उसमें विलम्ब अधिक लगता है क्योंकि **मन्त्र** अपने आप में एक विशिष्ट वातावरण रखता है तथा उसकी निरन्तरता से व्यक्ति उस वातावरण से अवश्य प्रभावित होता है।

- **मन्त्रों के साधन** में किसी मन्त्र को दस हजार बार, किसी को एक लाख बार और किसी का पुरश्चरण किया जाना निर्दिष्ट होता है। यह सब उस **मन्त्र** की और उद्देश्य की विशेषता पर निर्भर करता है।
- जिस **पाण्डु रोग** की चिकित्सा **'ऐलोपैथी'** दो और तीन सप्ताह में करती है, **'आयुर्वेद'** एक सप्ताह में करता है, उसी की चिकित्सा **'मन्त्र'** के द्वारा तीन ही दिन में कर दी जाती है और विशेषता यह कि रोगी को न दवा दी जाती है, न परहेज बताया जाता है। झाड़ने पर जिस पानी में हाथ दिलाया जाता है, वह पानी ही पीला हो जाता है और तीसरे दिन तो पानी साफ हो जाता है।
- **'टाइफाइड'** एक भयानक बीमारी है। इसकी चिकित्सा में बड़ी सावधानी रखनी पड़ती है। इसके साथ ही इसकी चिकित्सा मँहगी भी पड़ती है, किन्तु यह सुनकर सभी को आश्चर्य होगा कि मैंने एक व्यक्ति को देखा था, जो **'टाइफाइड'** के रोगी को **'मन्त्र'** द्वारा झाड़कर नीरोग कर देते थे। और वह भी मन्त्र तीन ही दिनों में। ऊपर से विशेषता यह कि रोगी न आ सके, तो उसकी कमीज-बनियान को ही झाड़ दिया जाता था!
- **साँप काटे की चिकित्सा** करनेवाले तो प्राय: प्रत्येक प्रान्त में मिल जाते हैं और उनकी विचित्र विधियाँ भी हम लोग सुनते ही रहते हैं, किन्तु हम उन पर विश्वास करने को तैयार नहीं हैं। यही एक कारण है कि ये सब विधियाँ लुप्त होती जा रही हैं। इन्हें हमने ही **'अन्ध-विश्वास'** कहकर हेय मान लिया है। दूसरा कारण यह भी है कि **मन्त्र-विज्ञान** के ज्ञाता कम रह गए हैं और ढोंग अधिक चल गया है। इसलिए भी इस पर से विश्वास उठता जा रहा है, परन्तु इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि **मन्त्र-शास्त्र** ही झूठा है। आज इसे प्रचलित किया जाए और व्यवहार में लाया जाए तथा इसके परीक्षण किए जायँ, तो राष्ट्रीय श्रम और धन-दोनों की बचत हो सकती है।

मनन करने योग्य बातें

'तन्त्र-शास्त्र' के अनुसार-**'मन्त्र'** उन शब्द या वाक्यों को कहते हैं, जिनका **'जप'** भिन्न-भिन्न देवताओं की प्रसन्नता अथवा भिन्न-भिन्न कामनाओं की सिद्धि के लिए करने का विधान है।

❀ ❀ ❀

सांसारिक आवागमनादि भयों का नाश करके **'मन्त्र'**-भक्त की रक्षा करता है, अतः वह **'मन्त्र'** कहलाता है।

❀ ❀ ❀

मन्त्रानुष्ठान से भगवती जगदम्बिका प्रसन्न होती हैं, उनकी प्रसन्नता से सकल देवता वशीभूत हो जाते हैं।

❀ ❀ ❀

मन्त्र-योग की महत्ता एवं कुछ विशेष बातें

- 'मन्त्र-योग'–एक यथार्थ व पूर्ण-शास्त्र है।
- 'मन्त्र'–दैवत है। 'मन्त्र' और उसका अध्यक्ष देवता एक है। 'मन्त्र'–दिव्य-शक्ति है। 'मन्त्र' के बार-बार रटने से **काम-क्रोध-लोभादि 'पाश'** (मल) दूर होते हैं।
- 'मन्त्र' को ताल-स्वर-सहित उच्चारण करने से **मन की चञ्चल वृत्तियाँ** दूर होकर साधक दिव्यत्व को प्राप्त करता है।
- 'मन्त्र' को शक्तिशाली बनाकर उसके द्वारा फल प्राप्त कर लेने की योग्यता ही '**मन्त्र-सिद्धि**' कहलाती है। साधनाा के द्वारा जब '**मन्त्र-शक्ति**' जागृत होती है, तब उसका अधिकारी देवता प्रकट होता है। जब पूर्ण '**मन्त्र-सिद्धि**' प्राप्त हो जाती है, तब **देवता का साक्षात्कार** होता है।
- सभी '**मन्त्र**' ऋषियों द्वारा प्राप्त हुए हैं। प्रत्येक **मन्त्र के ऋषि, छन्द, देवता, वीज, शक्ति और कीलक** (आधार) होते हैं, जिनके द्वारा '**मन्त्र-शक्ति**' विशेष रूप से सुदृढ़ होती है। **पूर्ण श्रद्धा, प्रेम-भाव और पवित्रता** के साथ '**मन्त्र**' का निरन्तर जप करने से '**मन्त्र-शक्ति**' जागृत होती है और वह साधक को सिद्धि प्रदान करती है, जिसके द्वारा वह **सुख, शान्ति और अमरत्व** प्राप्त करता है।
- '**मन्त्र'–तेज-पुञ्ज** है। '**मन्त्र' –अलौकिक सिद्धियाँ व शक्तियाँ** प्रदान करता है। '**मन्त्र**'–दृढ़ता **एवं शान्ति** प्रदान करता है। '**मन्त्र**' में **लौकिक, पारलौकिक ज्ञान** प्राप्त करने की शक्ति होती है।
- '**मन्त्र**' का जप कुछ समय के लिए जोर-जोर से, कुछ समय के लिए धीरे-धीरे और फिर कुछ समय के लिए मन में कीजिए। मन विभिन्नता या परिवर्त्तन चाहता है। एक ही प्रकार से कोई कार्य अधिक समय तक करते रहने से उसमें अरुचि हो जाती है।
- मन में किया जानेवाला '**मन्त्र-जप**' अधिक शक्ति-शाली होता है। उसको '**मानसिक मन्त्र-जप**' कहते हैं। जो जप जोर-जोर से उच्चारण किया जाता है, उसे '**वैखरी मन्त्र-जप**' कहते हैं। जो जप धीरे-धीरे किया जाता है, उसे '**उपांशु मन्त्र-जप**' कहते हैं।
- बुद्धि-रहित अर्थात् बिना भाव के किया गया '**मन्त्र-जप**' भी साधक के हृदय व मन को पवित्र करने में समर्थ होता है। ज्यों-ज्यों मन शुद्ध होता जाएगा, त्यों-त्यों भाव भी अपने आप आता जाएगा।
- **शब्द या ध्वनि–आकाश का गुण** है। वह आकाश के द्वारा उत्पन्न नहीं होता, परन्तु आकाश में उसका प्रकाशन होता है।
- '**मन्त्र**'–विशेष वर्णों के द्वारा बनता है। इन वर्णाक्षरों का क्रमिक जुटाव ही ध्वनि-विशेष को सङ्केतित करता है।
- '**मन्त्र**' का **वर्ण और स्वर-सहित शुद्ध उच्चारण** करना चाहिए। '**शब्द**'– चित्-शक्ति का स्पष्ट रूप हैं।

- **'वाचिक मन्त्र-जप'**–सांसारिक कोलाहल को बन्द कर देता है। इसमें जप खण्डित नहीं होता। वाचिक जप में यह लाभ है। साधारण मनुष्यों के लिए **'मानसिक मन्त्र-जप'** कठिन है तथा कुछ समय के बाद टूटन या अवरोध आ जाता है।
- रात्रि के समय **'मन्त्र-जप'** करते समय यदि आपको निद्रा आने लगे, तो हाथ में माला लेकर मन्त्रोच्चारण करते हुए मनिकाओं को घुमाइए। निद्रा भाग जाएगी। **'वाचिक मन्त्र-जप'** का यह दूसरा लाभ है। इस समय **'मानसिक जप'** का त्याग कीजिए। जब निद्रा आने लगे, तो खड़े हो जाइए और जप कीजिए।
- **शाण्डिल्य उपनिषद्** में कहा है–**'वैखरी मन्त्र-जप'** का प्रतिफल जैसा **वेदों** में कहा है, वैसा होता है, तो उससे हजार गुना अधिक फल **'उपांशु मन्त्र-जप'** से होता है तथा उससे करोड़ गुना अधिक फल **'मानसिक मन्त्र-जप'** से होता है।
- एक वर्ष तक **कण्ठ** में **'मन्त्र-जप'** कीजिए। यह **'वैखरी मन्त्र-जप'** है। दो वर्ष तक **हृदय** में कीजिए। यह **'मानसिक मन्त्र-जप'** है। एक वर्ष तक **नाभि** में कीजिए। यह **'श्वास मन्त्र-जप'** है। जब आपका अभ्यास बढ़ जाएगा, तब आपके अङ्ग-प्रत्यङ्ग तथा उरू में **'मन्त्र-जप'** होने लगेगा। आपके सारे शरीर में कँपकँपी होने लगेगी। आप **इष्ट-देवता के प्रेम** में गद्‌गद हो जाएँगे। आप अपने शरीर में ऐंठन तथा नेत्रों में आनन्दाश्रुओं का अनुभव करेंगे। आप **स्फूर्ति, ज्ञान** और **परमानन्द** को प्राप्त करेंगे। आपकी **वाक्-शक्ति** बढ़ेगी। आप अनेकानेक **सिद्धियाँ, ऐश्वर्य** तथा **पर-लोक के भोग** प्राप्त करेंगे।
- **'मन्त्र-जप'** करते समय यह भावना होनी चाहिए कि आपके हृदय में देदीप्यमान प्रकाश के भीतर आपके **इष्ट-देव** विराजमान हैं।
- किसी **'मन्त्र'** को सिद्ध करने के लिए उस **'मन्त्र'** का जब किसी निश्चित संख्या तक विशेष विधि-विधान के साथ भाव-सहित **'जप'** किया जाता है, तो उसे **'मन्त्र-पुरश्चरण'** कहते हैं। **'मन्त्र-पुरश्चरण'** में साधारणतया जिस मन्त्र के जितने अक्षर हों, उस मन्त्र के उतने ही लक्ष जप किए जाते हैं। **'मन्त्र-पुरश्चरण'** करनेवाले साधक को **फलाहार, शाकाहार** या **दुग्धाहार** करना चाहिए। वह कन्द, मूल, दही तथा हविष्यात्र (घी, दूध, शक्कर के साथ पके हुए चावल) भी ले सकता है। पवित्र नदी के **'तट'** पर, पहाड़ों के **'शिखर'** पर या **'गुफा'** में, पावन सघन **'वनों'** में, अश्वत्थ या विल्वादि वृक्ष के नीचे किसी **'तीर्थ-स्थान'** में, अपने **'घर'** के **'पूजा-कक्ष'** या **'गो-शाला'** या **'चतुष्पथ'**–जैसे विशिष्ट स्थानों में **'पुरश्चरण'** हो सकता है।

मनन करने योग्य बातें

कर-चरणादि-विशिष्ट-स्वरूप-देवता का स्थूल शरीर है, 'मन्त्र'-सूक्ष्म शरीर और 'वासना-मय रूप'-पर-शरीर है, जो ब्रह्मात्मा, परमात्मादि शब्दों से व्यवहत होता है।

भगवान् श्रीविष्णु-नाम-साधना

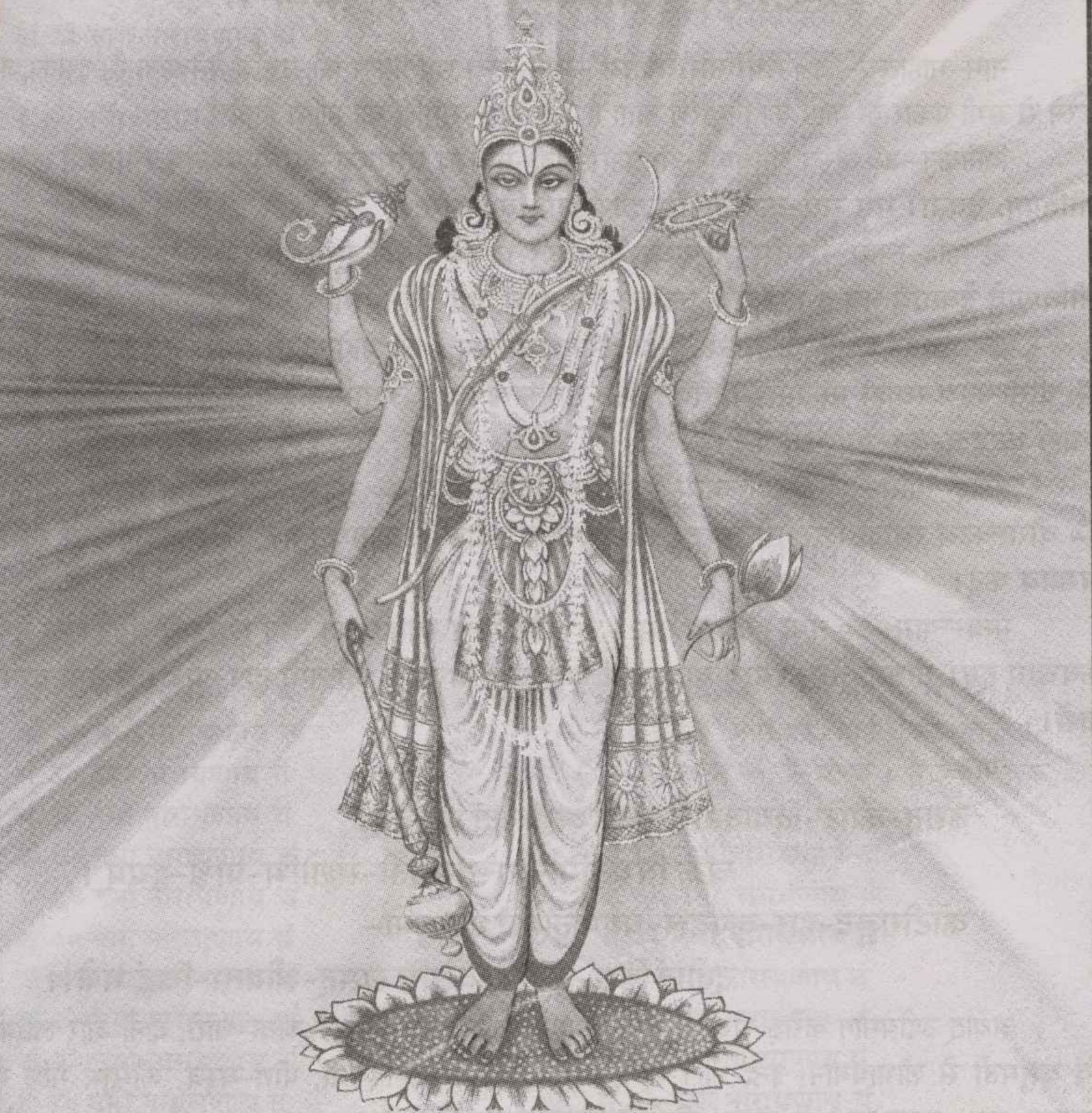

शङ्खं सु-चक्रं सु-गदां सरोजं, दोर्भिर्दधानं गरुडाधिरूढम् ।
श्रीवत्स-चिह्नं जगदादि-मूलं, तमाल-नीलं हृदि विष्णुमीडे।।

अर्थात् जो अपने हाथों में शङ्ख, चक्र, गदा एवं पद्म धारण किए हैं, जो गरुड़ पर सवार हैं, जिनके वक्षःस्थल में श्रीवत्स का चिह्न है, जो इस जगत् के आदि मूल कारण हैं, उन तमाल (नीली छालवाले वृक्ष) के समान नीले वर्णवाले भगवान् विष्णु की मैं स्तुति करता हूँ।

अष्टाक्षर-'श्रीविष्णु'-नाम-साधना

नाम-माहात्म्य-'ॐ नमो नारायणाय'-नाम-मन्त्र सब प्रकार की समृद्धि देनेवाला है। इसका जप करने से सभी प्रकार के कष्टों का निवारण होता है और सुख-समृद्धि की प्राप्ति होती है।

विनियोग-ॐ अस्य श्रीविष्णु-अष्टाक्षर-महा-मन्त्रस्य श्रीसाध्य-नारायण ऋषिः। गायत्री छन्दः। श्रीविष्णुः देवता। मम सर्व-कामना-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास-शिरसि श्रीसाध्य-नारायण-ऋषये नमः। मुखे गायत्री-छन्दसे नमः। हृदये श्रीविष्णवे देवतायै नमः। मम सर्व-कामना-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ।

कर-न्यास-ॐ क्रुद्धोल्काय स्वाहा अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ महोल्काय स्वाहा तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ वीरोल्काय स्वाहा मध्यमाभ्यां वषट्। ॐ द्युल्काय स्वाहा अनामिकाभ्यां हुम्। ॐ सहस्त्रोल्काय स्वाहा करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्।

षडङ्ग-न्यास-ॐ क्रुद्धोल्काय स्वाहा हृदयाय नमः। ॐ महोल्काय स्वाहा शिरसे स्वाहा। ॐ वीरोल्काय स्वाहा शिखायै वषट्। ॐ द्युल्काय स्वाहा कवचाय हुम्। ॐ सहस्त्रोल्काय स्वाहा अस्त्राय फट्।

मन्त्र-न्यास-ॐ नमो हृदयाय नमः। नं नमो शिरसे स्वाहा। मों नमो शिखायै वषट्। नां नमो कवचाय हुम्। रां नमो नेत्र-त्रयाय वौषट्। यं नमो अस्त्राय फट्। णां नमो दक्ष-पार्श्वे। यं नमो वाम-पार्श्वे।

ध्यान-

उद्यत्-कोटि-दिवाकराभमनिशं शङ्खं गदां पङ्कजम्,
चक्रं विभ्रतमिन्दिरा-वसुमती-संशोभि-पार्श्व-द्वयम्।
कोटीराङ्गद-हार-कुण्डल-धरं पीताम्बरं कौस्तुभो-
द्दीप्तं विश्व-धरं स्व-वक्षसि लसत्-श्रीवत्स-चिह्नं भजे।।

अर्थात् उदीयमान करोड़ सूर्य के समान आभा, शङ्ख-गदा-कमल-चक्र-धारी, दोनों ओर लक्ष्मी एवं वसुमती से शोभायमान। इन्द्र-नील मणि, अङ्गद, हार-कुण्डल-धारी, पीत-वस्त्र, कौस्तुभ मणि से उज्ज्वल, वक्षः-स्थल पर 'श्री-वत्स'-चिह्न से विभूषित, विश्वम्भर विष्णु भगवान् का मैं भजन करता हूँ।

मानस-पूजा- लं पृथिव्यात्मकं गन्धं श्रीविष्णवे समर्पयामि नमः। हं आकाशात्मकं पुष्पं श्रीविष्णवे समर्पयामि नमः। यं वाय्वात्मकं धूपं श्रीविष्णवे घ्रापयामि नमः। रं वह्न्यात्मकं दीपं श्रीविष्णवे दर्शयामि नमः। वं अमृतात्मकं नैवेद्यं श्रीविष्णवे निवेदयामि नमः। सं सर्वात्मकं ताम्बूलं श्रीविष्णवे समर्पयामि नमः।

मन्त्र- ॐ नमो नारायणाय (८ अक्षर)। 'वर्ण-माला' में इस मन्त्र का 'जप' निम्न प्रकार से करना चाहिए-

ॐ

१. अं ॐ नमो नारायणाय अं
२. आं ॐ नमो नारायणाय आं
३. इं ॐ नमो नारायणाय इं
४. ईं ॐ नमो नारायणाय ईं
५. उं ॐ नमो नारायणाय उं
६. ऊं ॐ नमो नारायणाय ऊं
७. ऋं ॐ नमो नारायणाय ऋं
८. ॠं ॐ नमो नारायणाय ॠं
९. ऌं ॐ नमो नारायणाय ऌं
१०. ॡं ॐ नमो नारायणाय ॡं
११. एं ॐ नमो नारायणाय एं
१२. ऐं ॐ नमो नारायणाय ऐं
१३. ओं ॐ नमो नारायणाय ओं
१४. औं ॐ नमो नारायणाय औं
१५. अं ॐ नमो नारायणाय अं
१६. अः ॐ नमो नारायणाय अः
१७. कं ॐ नमो नारायणाय कं
१८. खं ॐ नमो नारायणाय खं
१९. गं ॐ नमो नारायणाय गं
२०. घं ॐ नमो नारायणाय घं
२१. ङं ॐ नमो नारायणाय ङं
२२. चं ॐ नमो नारायणाय चं
२३. छं ॐ नमो नारायणाय छं
२४. जं ॐ नमो नारायणाय जं
२५. झं ॐ नमो नारायणाय झं
२६. ञं ॐ नमो नारायणाय ञं
२७. टं ॐ नमो नारायणाय टं
२८. ठं ॐ नमो नारायणाय ठं
२९. डं ॐ नमो नारायणाय डं
३०. ढं ॐ नमो नारायणाय ढं
३१. णं ॐ नमो नारायणाय णं
३२. तं ॐ नमो नारायणाय तं
३३. थं ॐ नमो नारायणाय थं
३४. दं ॐ नमो नारायणाय दं
३५. धं ॐ नमो नारायणाय धं
३६. नं ॐ नमो नारायणाय नं
३७. पं ॐ नमो नारायणाय पं
३८. फं ॐ नमो नारायणाय फं
३९. बं ॐ नमो नारायणाय बं
४०. भं ॐ नमो नारायणाय भं
४१. मं ॐ नमो नारायणाय मं
४२. यं ॐ नमो नारायणाय यं
४३. रं ॐ नमो नारायणाय रं
४४. लं ॐ नमो नारायणाय लं
४५. वं ॐ नमो नारायणाय वं
४६. शं ॐ नमो नारायणाय शं
४७. षं ॐ नमो नारायणाय षं
४८. सं ॐ नमो नारायणाय सं
४९. हं ॐ नमो नारायणाय हं
५०. ळं ॐ नमो नारायणाय ळं

क्षं

इसके बाद 'विलोम'-क्रम से 'ळं' से 'अं' तक (५१ से १०० तक) 'जप' करे। फिर 'अष्ट-मातृका-वर्णों' (अं-कं-चं-टं-तं-पं-यं-शं) से १०८ तक जप करे। यथा-

१०१. अं ॐ नमो नारायणाय अं
१०२. कं ॐ नमो नारायणाय कं
१०३. चं ॐ नमो नारायणाय चं
१०४. टं ॐ नमो नारायणाय टं
१०५. तं ॐ नमो नारायणाय तं
१०६. पं ॐ नमो नारायणाय पं
१०७. यं ॐ नमो नारायणाय यं
१०८. शं ॐ नमो नारायणाय शं

होम- यथा-शक्ति 'जप' करने के बाद १. घी, शहद और शक्कर से युक्त पद्म-पुष्पों अर्थात् कमल के फूलों से होम करने से सभी कामनाओं की पूर्ति होती है। इह-लोक में सुख तथा पर-लोक में मोक्ष प्राप्त होता है। २. बिल्व से होम करने से धन की प्राप्ति होती है। ३. तिल से होम करने से आरोग्य की प्राप्ति होती है।

षडक्षर-'श्रीविष्णु'-नाम-साधना

नाम-माहात्म्य-'ॐ, ऐं, ह्रीं, श्रीं, क्लीं, हूँ'-छः बीज-युक्त भगवान् विष्णु के छः नाम-मन्त्र क्रमशः १. मोक्ष, २. ज्ञान, ३. भुक्ति-मुक्ति, ४. ऐश्वर्य, ५. वंश-वृद्धि-कारक एवं ६. शत्रु-नाशक हैं। यहाँ ऐश्वर्य-वृद्धि-कारक 'श्रीं'-बीज-युक्त भगवान् विष्णु के नाम-मन्त्र का विधान दिया जा रहा है।

विनियोग-ॐ अस्य श्रीविष्णु-षडक्षर-मन्त्रस्य श्रीनारद ऋषिः। गायत्री छन्दः। श्रीविष्णुः देवता। मम सकल-कष्ट-दारिद्र्य-परिहारार्थं जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास-शिरसि श्रीनारद-ऋषये नमः। मुखे गायत्री-छन्दसे नमः। हृदये श्रीविष्णवे देवतायै नमः। मम सकल-कष्ट-दारिद्र्य-परिहारार्थं जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ।

ध्यान-

मेघ-श्यामं सु-नयनं, काक-पक्ष-विराजितम् ।
राधिकादि-प्रिया-युक्तं, पर्यटन्तं वने वने।
विचित्र-परिधिं वंशी, दधतं वाम-दक्षयोः ।।

अर्थात् कनपटियों के ऊपर काले-लम्बे-घुँघराले बालों या अल्कों से देदीप्यमान, सुन्दर नयनवाले, वनों में राधिका आदि प्रियायों से युक्त भ्रमण करनेवाले और बाँएँ तथा दाँएँ हाथों से सूर्य-चन्द्र-जैसी प्रकाशमान सुन्दर वंशी को धारण करनेवाले भगवान् विष्णु का मैं ध्यान करता हूँ।

मानस-पूजा-

लं पृथिव्यात्मकं गन्धं श्रीविष्णवे समर्पयामि नमः।
हं आकाशात्मकं पुष्पं श्रीविष्णवे समर्पयामि नमः।
यं वाय्वात्मकं धूपं श्रीविष्णवे घ्रापयामि नमः।
रं वह्न्यात्मकं दीपं श्रीविष्णवे दर्शयामि नमः।
वं अमृतात्मकं नैवेद्यं श्रीविष्णवे निवेदयामि नमः।
सं सर्वात्मकं ताम्बूलं श्रीविष्णवे समर्पयामि नमः।

मन्त्र- श्रीं हरये नमः (६ अक्षर)। 'वर्ण-माला' में इस मन्त्र का 'जप' पृष्ठ-संख्या ४३ पर प्रकाशित विधि के अनुसार 'ॐ नमो नारायणाय' के स्थान पर 'श्रीं हरये नमः' लगाकर करना चाहिए।

होम- यथा-शक्ति 'जप' करने के बाद पञ्चामृत से होम करना चाहिए।

विशेष : नित्य कर्मों के बाद नियम-पूर्वक प्रति-दिन अपने शरीर के भीतर हृदयाकाश में, भगवान् विष्णु के उपर्युक्त स्वरूप का ध्यान करना चाहिए और 'श्रीं' आदि वीजों से युक्त भगवान् के नाम का जप करना चाहिए। ऐसा करने से दरिद्रता दूर होती है और बाधाएँ नष्ट होती हैं।

१. 'श्रीमत्स्यावतार'-नाम-मन्त्र-साधना

भगवतीतारा

द्वितीया महा-विद्या भगवती तारा से उद्‌भूत
विश्व के संरक्षक भगवान् विष्णु का
दूसरा अवतार 'श्रीमत्स्यावतार'

जयन्ती :
चैत्र शुक्ला प्रतिप्रदा

ॐश्रीमत्स्यावताराायनमः

आदाय वेदाः सकलाः समुद्रान्, निहत्य शङ्खासुरमत्युदग्रम् ।
दत्ताः पुरा येन पितामहाय, विष्णुं तमाद्यं भज मत्स्य-रूपम् ।।

अर्थात् अत्यन्त भीषण शङ्खासुर का वध कर, समुद्र के गर्भ से समस्त वेदों को निकालकर प्रजापति ब्रह्माजी को प्रदान करनेवाले भगवान् विष्णु के आदि-स्वरूप मत्स्यावतार का मैं भजन करता हूँ।

द्वादशाक्षर-'श्रीमत्स्यावतार'-नाम-मन्त्र-साधना

नाम-माहात्म्य-महा-विद्या तारा से उद्भूत श्रीमीन-विग्रह भगवान् विष्णु के नाम-मन्त्र-जप से दीर्घायु एवं लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। श्रीमीन-विग्रह भगवान् विष्णु के अनुग्रह से मनुष्यों को सांसारिक आनन्द के साथ-साथ 'परब्रह्म' का ज्ञान भी होता है।

विनियोग-ॐ अस्य श्रीमत्स्यावतार-द्वादशाक्षर-मन्त्रस्य श्रीब्रह्मा ऋषिः। गायत्री छन्दः। श्रीमीन-विग्रह भगवान् रमा-नाथ देवता। श्रीं वीजं। मं कीलकं। मम दीर्घायु-शरीरारोग्य-लक्ष्मी-फल-प्राप्त्यर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास-शिरसि श्रीब्रह्मा-ऋषये नमः। मुखे गायत्री-छन्दसे नमः। हृदये मीन-विग्रह भगवान् रमा-नाथाय देवतायै नमः। श्रीं-वीजाय नमः गुह्ये। मं-कीलकाय नमः नाभौ। मम दीर्घायु-शरीरारोग्य-लक्ष्मी-फल-प्राप्त्यर्थे जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ।

कर-न्यास-श्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः। श्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। श्रूं मध्यमाभ्यां वषट्। श्रैं अनामिकाभ्यां हुम्। श्रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। श्रः करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्।

षडङ्ग-न्यास-श्रां हृदयाय नमः। श्रीं शिरसे स्वाहा। श्रूं शिखायै वषट्। श्रैं कवचाय हुम्। श्रौं नेत्र-त्रयाय वौषट्। श्रः अस्त्राय फट्।

ध्यान-

नात्यघोरो हि न सम-आकण्ठं वा नराकृतिः। घन-श्यामश्चतुर्बाहुः, शङ्ख-चक्र-गदा-धरः।।
शृङ्गि-मत्स्य-निभो मूर्धा, लक्ष्मीर्वक्षसि राजते। पद्म-चिह्नित-सर्वाङ्गः, सुन्दरश्चारु-लोचनः।।

अर्थात् भगवान् मस्त्य के सारे शरीर के सभी अङ्ग 'कमल-पुष्प' से अंकित होने के कारण बहुत ही सुन्दर हैं और उनके नेत्र बड़े ही सुन्दर हैं। 'मत्स्य' के शिरो-भाग के समान उनकी मूर्धा है और उनके वक्षः-स्थल में भगवती लक्ष्मी जी शोभायमान हैं। न वे अत्यन्त अघोर हैं, न कण्ठ के समान मानव-आकृति है। काले मेघ के समान 'श्याम-वर्ण' एवं चार भुजाओंवाले शङ्ख-चक्र-गदा-पद्म-धारी साक्षात् भगवान् विष्णु ही हैं।

मानस-पूजा-

लं पृथिव्यात्मकं गन्धं श्रीमीन-विग्रह भगवान् रमा-नाथाय समर्पयामि नमः।
हं आकाशात्मकं पुष्पं श्रीमीन-विग्रह भगवान् रमा-नाथाय समर्पयामि नमः।
यं वाय्वात्मकं धूपं श्रीमीन-विग्रह भगवान् रमा-नाथाय घ्रापयामि नमः।
रं वह्न्यात्मकं दीपं श्रीमीन-विग्रह भगवान् रमा-नाथाय दर्शयामि नमः।
वं अमृतात्मकं नैवेद्यं श्रीमीन-विग्रह भगवान् रमा-नाथाय निवेदयामि नमः।
सं सर्वात्मकं ताम्बूलं श्रीमीन-विग्रह भगवान् रमा-नाथाय समर्पयामि नमः।

मन्त्र- ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं (१२ अक्षर)। 'वर्ण-माला' में इस मन्त्र का 'जप' निम्न प्रकार से करना चाहिए-

१. अं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं अं
२. आं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं आं
३. इं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं इं
४. ईं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं ईं
५. उं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं उं
६. ऊं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं ऊं
७. ऋं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं ऋं
८. ॠं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं ॠं
९. ऌं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं ऌं
१०. ॡं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं ॡं
११. एं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं एं
१२. ऐं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं ऐं
१३. ओं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं ओं
१४. औं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं औं
१५. अं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं अं
१६. अः ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं अः
१७. कं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं कं
१८. खं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं खं
१९. गं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं गं
२०. घं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं घं
२१. ङं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं ङं
२२. चं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं चं
२३. छं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं छं
२४. जं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं जं
२५. झं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं झं
२६. ञं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं ञं
२७. टं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं टं
२८. ठं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं ठं
२९. डं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं डं
३०. ढं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं ढं
३१. णं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं णं
३२. तं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं तं
३३. थं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं थं
३४. दं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं दं
३५. धं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं धं
३६. नं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं नं
३७. पं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं पं
३८. फं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं फं
३९. बं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं बं
४०. भं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं भं
४१. मं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं मं
४२. यं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं यं
४३. रं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं रं
४४. लं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं लं
४५. वं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं वं
४६. शं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं शं
४७. षं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं षं
४८. सं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं सं
४९. हं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं हं
५०. ळं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं ळं

इसके बाद 'विलोम'-क्रम से 'ळं' से 'अं' तक (५१ से १०० तक) 'जप' करे। फिर 'अष्ट-मातृका-वर्णों' (अं-कं-चं-टं-तं-पं-यं-शं) से १०१ से १०८ तक 'जप' करे। यथा-

१०१.अं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं अं
१०२.कं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं कं
१०३.चं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं चं
१०४.टं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं टं
१०५.तं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं तं
१०६.पं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं पं
१०७.यं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं यं
१०८.शं ॐ नमो भगवते मं मत्स्याय श्रीं शं

होम- यथा-शक्ति 'जप' करने के बाद घी, शहद, शक्कर से युक्त तिलों से होम करे, तो दीर्घायु, आरोग्य एवं लक्ष्मी की प्राप्ति होती है।

२. 'श्रीकूर्मावतार'-नाम-मन्त्र-साधना

अष्टम महा-विद्या भगवती बगला से उद्भूत
विश्व के संरक्षक भगवान् विष्णु का
दूसरा अवतार 'श्रीकूर्मावतार'

भगवतीबगला

जयन्ती :
ज्येष्ठ शुक्ला द्वितीया

ॐश्रीकूर्मावतारायनमः

दिव्यामृतार्थं मथिते महाब्धौ, देवासुराभ्यां वासुकि-मन्दराभ्याम् ।
भूमेर्महा-वेग-विघूर्णितायास्तं कूर्ममाधार-गतं स्मरामि ।।

अर्थात् देवताओं एवं असुरों ने दिव्य अमृत की प्राप्ति के लिए जब वासुकि तथा मन्दराचल की सहायता से समुद्र का मन्थन किया था, तब वेग से डाँवाडोल हो रही विक्षुब्ध एवं विचलित पृथ्वी को कूर्म-रूप से धारण कर आधार प्रदान करनेवाले श्रीकूर्मावतार भगवान् विष्णु का मैं स्मरण करता हूँ।

द्वा-विंशत्यक्षर-'श्रीकूर्मावतार'-नाम-मन्त्र-साधना

नाम-माहात्म्य-महा-विद्या बगला से उद्भूत श्रीकूर्म-विग्रह भगवान् विष्णु के नाम-मन्त्र-जप से सभी प्रकार की कठिनाइयाँ दूर होती हैं, शत्रु पराजित होते हैं और सर्वत्र विजय प्राप्त होती है।

विनियोग-ॐ अस्य श्रीकूर्मावतार-द्वा-विंशत्यक्षर-मन्त्रस्य श्रीकश्यप ऋषिः। प्रकृति छन्दः। श्रीकूर्म-विग्रह भगवान् विष्णुः देवता। कुं बीजं। मम सर्व-शत्रु-पराजयार्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास-शिरसि श्रीकश्यप-ऋषये नमः। मुखे प्रकृति-छन्दसे नमः। हृदये श्रीकूर्म-विग्रह भगवान् विष्णवे देवतायै नमः। 'कुं'-बीजाय नम गुह्ये। मम सर्व-शत्रु-पराजयार्थे जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ।

कर-न्यास-ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः। नमो तर्जनीभ्यां स्वाहा। भगवते मध्यमाभ्यां वषट्। कुं अनामिकाभ्यां हुम्। कूर्माय कनिष्ठाभ्यां वौषट्। धराधर-धुरन्धराय नमः करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्।

षडङ्ग-न्यास-ॐ हृदयाय नमः। नमो शिरसे स्वाहा। भगवते शिखायै वषट्। कुं कवचाय हुम्। कूर्माय नेत्र-त्रयाय वौषट्। धराधर-धुरन्धराय नमः अस्त्राय फट्।

ध्यान-

शङ्ख-चक्र-गदा-धरं पीताम्बरं, कूर्म-पृष्ठं लसल्लांगूल-शोभितम् ।
दीर्घ-ग्रीवं महा-ग्राहं, गिरि-रतं रक्त-लोचनम् ।।

अर्थात् लम्बी गर्दन एवं मजबूत पकड़वाले, कछुए के समान अत्यन्त सुदृढ़ पीठवाले, सम्पूर्ण विघ्नों से मुक्त करनेवाले, तीनों लोकों की रक्षा के लिए मन्दराचल पर्वत को धारण करनेवाले सर्वोपरि मार्ग-दर्शक भगवान् कूर्म का मैं ध्यान करता हूँ।

मानस-पूजा-

लं पृथिव्यात्मकं गन्धं श्रीकूर्म-विग्रह भगवान् विष्णवे समर्पयामि नमः।
हं आकाशात्मकं पुष्पं श्रीकूर्म-विग्रह भगवान् विष्णवे समर्पयामि नमः।
यं वाय्वात्मकं धूपं श्रीकूर्म-विग्रह भगवान् विष्णवे घ्रापयामि नमः।
रं वह्न्यात्मकं दीपं श्रीकूर्म-विग्रह भगवान् विष्णवे दर्शयामि नमः।
वं अमृतात्मकं नैवेद्यं श्रीकूर्म-विग्रह भगवान् विष्णवे निवेदयामि नमः।
सं सर्वात्मकं ताम्बूलं श्रीकूर्म-विग्रह भगवान् विष्णवे समर्पयामि नमः।

मन्त्र- ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः (२२ अक्षर)। 'वर्ण-माला' में इस मन्त्र का 'जप' निम्न प्रकार से करना चाहिए-

ॐ

१. अं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः अं

२. आं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः आं

३. इं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः इं

४. ईं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः ईं

५. उं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः उं

६. ऊं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः ऊं

७. ऋं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः ऋं

८. ॠं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः ॠं

९. ऌं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः ऌं

१०. ॡं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः ॡं

११. एं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः एं

१२. ऐं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः ऐं

१३. ओं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः ओं

१४. औं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः औं

१५. अं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः अं

१६. अः ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः अः

१७. कं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः कं

१८. खं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः खं

१९. गं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः गं

२०. घं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः घं

२१. ङं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः ङं

२२. चं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः चं

२३. छं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः छं

२४. जं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः जं

२५. झं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः झं

२६. ञं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः ञं

२७. टं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः टं

२८. ठं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः ठं

२९. डं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः डं

३०. ढं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः ढं

३१. णं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः णं

३२. तं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः तं

३३. थं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः थं

३४. दं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः दं

३५. धं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः धं

३६. नं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः नं

३७. पं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः पं

३८. फं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः फं

३९. बं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः बं

४०. भं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः भं

४१. मं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः मं

४२. यं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः यं

४३. रं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः रं

४४. लं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः लं

४५. वं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः वं

४६. शं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः शं

४७. षं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः षं

४८. सं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः सं

४९. हं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः हं

५०. ळं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः ळं

क्षं

इसके बाद 'विलोम'-क्रम से 'ळं' से 'अं' तक (५१ से १०० तक) 'जप' करे। फिर 'अष्ट-मातृका-वर्णों' (अं-कं-चं-टं-तं-पं-यं-शं) से १०१ से १०८ तक 'जप' करे। यथा-

१०१. अं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः अं

१०२. कं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः कं

१०३. चं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः चं

१०४. टं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः टं

१०५. तं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः तं

१०६. पं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः पं

१०७. यं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः यं

१०८. शं ॐ नमो भगवते कुं कूर्माय धराधर-धुरन्धराय नमः शं

होम- यथा-शक्ति 'जप' करने के बाद घृत से होम करे, तो सभी शत्रु पराजित होते हैं और सर्वत्र विजय प्राप्त होती है।

३. 'श्रीवराहावतार'-नाम-मन्त्र-साधना

सप्तम महा-विद्या भगवती धूमावती से उद्भूत
विश्व के संरक्षक भगवान् विष्णु का
तीसरा अवतार 'श्रीवराहावतार'

भगवती धूमावती

जयन्ती :
आश्विन शुक्ला सप्तमी

ॐश्रीवराहावतारायनमः

समुद्र-काञ्ची सरिदुत्तरीया, वसुन्धरा मेरु-किरीटभारा ।
दंष्ट्रागतो येन समुद्धृता भूस्तमादिकोलं शरणं प्रपद्ये ।।

अर्थात् समुद्रों को करधनी, सुमेरु को मुकुट एवं नदियों को उत्तरीय के रूप में धारण करनेवाली पृथ्वी को जिन्होंने अपने दन्ताग्र पर धारण किया था, मैं उन्हीं वराहावतार भगवान् विष्णु की शरण लेता हूँ।

त्रयो-त्रिंशत्यक्षर-'श्रीवराहावतार'-नाम-मन्त्र-साधना

नाम-माहात्म्य-महा-विद्या धूमावती से उद्‌भूत श्रीवराह-विग्रह भगवान् विष्णु के नाम-मन्त्र-जप से सभी प्रकार की बाधाएँ दूर होती हैं तथा सुख-समृद्धि की प्राप्ति होती है।

विनियोग-ॐ अस्य श्रीवराहावतार-त्रयो-त्रिंशत्यक्षर-मन्त्रस्य श्रीभार्गव ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। श्रीआदि-वराह देवता। मम सर्व-कामना-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास-शिरसि श्रीभार्गव-ऋषये नमः। मुखे अनुष्टुप्-छन्दसे नमः। हृदये श्रीआदि-वराहाय देवतायै नमः। मम सर्व-कामना-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ।

कर-न्यास-एक-दंष्ट्राय अंगुष्ठाभ्यां नमः। व्योम-केशाय तर्जनीभ्यां स्वाहा। तेजोऽधिपतये मध्यमाभ्यां वषट्। विश्व-रूपाय अनामिकाभ्यां हुम्। महा-दंष्ट्राय कनिष्ठाभ्यां फट्।

षडङ्ग-न्यास-एक-दंष्ट्राय हृदयाय नमः। व्योम-केशाय शिरसे स्वाहा। तेजोऽधिपतये शिखायै वषट्। विश्व-रूपाय कवचाय हुम्। महा-दंष्ट्राय नेत्र-त्रयाय फट्।

ध्यान-

आपादं जानु-देशाद् वर-कनक-निभं, नाभि-देशादधस्ता-
न्मुक्ताभं, कण्ठ-देशात् तरुण-रवि-निभं, मस्तकान्नील-भासम् ।।
ईड़े हस्तैर्दधानं रथ-चरण-दरौ खड्ग-खेटौ गदाख्यम् ।
शक्तिं दानोभये च क्षिति-धरण-लसद्-दंष्ट्रमाद्यं वराहम् ।।

अर्थात् भगवान् वराह के जानु-देश से लेकर पैरों तक का शरीर स्वर्ण-जैसा, नाभि-देश से नीचे जानु-देश तक का मोती-जैसा, कण्ठ-देश से नाभि-देश तक का युवा-सूर्य-जैसा और शिरो-देश से कण्ठ-देश तक नील-वर्ण है। वे हाथों में शङ्ख, चक्र, खड्ग, खेटक, गदा, शक्ति, वर-मुद्रा और अभय-मुद्रा धारण किए हैं। दाँतों पर धरती शोभायमान है। ऐसे आदि-वराह भगवान् की मैं स्तुति करता हूँ।

मानस-पूजा-लं पृथिव्यात्मकं गन्धं श्रीआदि-वराहाय समर्पयामि नमः। हं आकाशात्मकं पुष्पं श्रीआदि-वराहाय समर्पयामि नमः। यं वाय्वात्मकं धूपं श्रीआदि-वराहाय घ्रापयामि नमः। रं वह्न्यात्मकं दीपं श्रीआदि-वराहाय दर्शयामि नमः। वं अमृतात्मकं नैवेद्यं श्रीआदि-वराहाय निवेदयामि नमः। सं सर्वात्मकं ताम्बूलं श्रीआदि-वराहाय समर्पयामि नमः।

मन्त्र- ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा (३३ अक्षर)। 'वर्ण-माला' में इस मन्त्र का 'जप' आगे दी गई विधि के अनुसार करना चाहिए।

विशेष : भाद्रपद शुक्लाष्टमी को एक श्वेत शिला (पत्थर) लेकर पञ्च-गव्य (१. गो-दुग्ध, २. गो-दधि, ३. गो-घृत, ४. गो-मय, ५. गो-मूत्र) में उसे रक्खे। उस शिला को स्पर्श करते हुए उक्त मन्त्र का १० हजार बार जप करे। जप के बाद उत्तर-मुख होकर उक्त शिला को पृथ्वी में गाड़ दें। ऐसा करने से शत्रु-कृत, चौर-कृत या महा-भूत-कृत समस्त बाधाएँ दूर होती हैं।

ॐ

१. अं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा अं
२. आं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा आं
३. इं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा इं
४. ईं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा ईं
५. उं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा उं
६. ऊं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा ऊं
७. ऋं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा ऋं
८. ॠं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा ॠं
९. ऌं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा ऌं
१०. ॡं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा ॡं
११. एं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा एं
१२. ऐं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा ऐं
१३. ओं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा ओं
१४. औं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा औं
१५. अं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा अं
१६. अः ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा अः
१७. कं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा कं
१८. खं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा खं
१९. गं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा गं
२०. घं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा घं
२१. ङं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा ङं
२२. चं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा चं
२३. छं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा छं
२४. जं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा जं
२५. झं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा झं
२६. ञं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा ञं
२७. टं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा टं
२८. ठं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा ठं
२९. डं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा डं
३०. ढं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा ढं
३१. णं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा णं
३२. तं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा तं

३३. थं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा थं

३४. दं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा दं

३५. धं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा धं

३६. नं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा नं

३७. पं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा पं

३८. फं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा फं

३९. बं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा बं

४०. भं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा भं

४१. मं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा मं

४२. यं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा यं

४३. रं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा रं

४४. लं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा लं

४५. वं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा वं

४६. शं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा शं

४७. षं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा षं

४८. सं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा सं

४९. हं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा हं

५०. ळं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा ळं

क्षं

इसके बाद 'विलोम'-क्रम से 'ळं' से 'अं' तक (५१ से १०० तक) 'जप' करे। फिर 'अष्ट-मातृका-वर्णों' (अं-कं-चं-टं-तं-पं-यं-शं) से १०१ से १०८ तक 'जप' करे। यथा-

१०१. अं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा अं

१०२. कं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा कं

१०३. चं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा चं

१०४. टं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा टं

१०५. तं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा तं

१०६. पं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा पं

१०७. यं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा यं

१०८. शं ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्वः-
पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा शं

होम- १. यथा-शक्ति 'जप' करने के बाद घृत, शहद, शक्कर से युक्त पद्म-पुष्पों से होम करे, तो सभी कामनाओं की सिद्धि होती है। २. राज-वृक्ष (सोमालू) की समिधा से होम करे, तो सभी प्रकार की सम्पत्ति की प्राप्ति होती हैं। ३. शालि (चावल) से होम करे, तो स्मृद्धि-लाभ होता है। धान्य-भण्डार से घर भर जाता है। ४. केवल घृत से होम करने से एक मण्डल (४९ दिन) के भीतर स्वर्ण-लाभ होता है।

४. 'श्रीनृसिंहावतार'-नाम-मन्त्र-साधना

षष्ठम महा-विद्या भगवती छिन्न-मस्ता से उद्‌भूत
विश्व के संरक्षक भगवान् विष्णु का
चौथा अवतार 'श्रीनृसिंहावतार'

भगवतीछिन्न-मस्ता

जयन्ती :
वैशाख शुक्ला चतुर्दशी

ॐश्रीनृसिंहावतारायनमः

भक्तार्त्ति-भङ्ग-क्षमया धिया यः, स्तम्भान्तरालादुदितो नृसिंहः।
रिपुं सुराणां निशितैर्नखाग्रैर्विदारयन्तं न च विस्मरामि ।।

अर्थात् भक्त प्रहलाद के सङ्कट के निवारण के लिए नृसिंह-रूप से स्तम्भ से प्रकट होकर, जिन्होंने देवताओं के शत्रु हिरण्य-कशिपु को अपने नखों से विदीर्ण कर दिया था, मैं उन्हीं नृसिंहावतार भगवान् विष्णु का स्मरण करता हूँ।

अष्टाक्षर-'श्रीनृसिंहावतार'-नाम-मन्त्र-साधना

नाम-माहात्म्य–महा-विद्या छिन्नमस्ता से उद्भूत श्रीनृसिंह-विग्रह भगवान् विष्णु के नाम-मन्त्र-जप से सभी प्रकार की कामनाएँ पूर्ण होती हैं। आपका प्रस्तुत अष्टाक्षर-मन्त्र 'काम-प्रद मणि' के समान फल-दायक है।

विनियोग–ॐ अस्य श्रीनृसिंहावतार-अष्टाक्षर-मन्त्रस्य श्रीब्रह्मा ऋषिः। गायत्री छन्दः। श्रीनृसिंहः देवता। मम सर्व-कामना-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास–शिरसि ब्रह्मणे-ऋषये नमः। मुखे गायत्री-छन्दसे नमः। हृदये श्रीनृसिंहाय देवतायै नमः। मम सर्व-कामना-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ।

कर-न्यास–क्षां अंगुष्ठाभ्यां नमः। क्षीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। क्षूं मध्यमाभ्यां वषट्। क्षैं अनामिकाभ्यां हुम्। क्षौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। क्षः करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्।

षडङ्ग-न्यास–क्षां हृदयाय नमः। क्षीं शिरसे स्वाहा। क्षूं शिखायै वषट्। क्षैं कवचाय हुम्। क्षौं नेत्र-त्रयाय वौषट्। क्षः अस्त्राय फट्।

ध्यान–

माणिक्याद्रि-सम-प्रभं निज-रुचा सन्त्रस्त-रक्षो-गणम् ।
जानु-न्यस्त-कराम्बुजं त्रि-नयनं रत्नोल्लसद्-भूषणम् ।।
बाहुभ्यां धृत-शङ्ख-चक्रमनिशं दंष्ट्रोग्र-वक्त्रोल्लस-
ज्ज्वाला-जिह्वमुदग्र-केश-निचयं वन्दे नृसिंहं विभुम् ।।

अर्थात् भगवान् नृसिंह माणिक्य-पर्वत-जैसी प्रभावाले हैं और अपने तेज से राक्षसों को भयभीत कर रहे हैं। वे त्रि-नेत्र हैं और रत्न-जटित आभूषणों से शोभायमान हैं। दो कर-कमल घुटनों पर रखे हैं और अन्य दो भुजाओं में शङ्ख और चक्र धारण किए हैं। दाँतों द्वारा उग्र मुख से अग्नि-शिखा के समान जिह्वा बाहर निकली हुई है। दीर्घ केशों से युक्त भगवान् नृसिंह की मैं वन्दना करता हूँ।

मानस-पूजा–लं पृथिव्यात्मकं गन्धं श्रीनृसिंहाय समर्पयामि नमः। हं आकाशात्मकं पुष्पं श्रीनृसिंहाय समर्पयामि नमः। यं वाय्वात्मकं धूपं श्रीनृसिंहाय घ्रापयामि नमः। रं वह्न्यात्मकं दीपं श्रीनृसिंहाय दर्शयामि नमः। वं अमृतात्मकं नैवेद्यं श्रीनृसिंहाय निवेदयामि नमः। सं सर्वात्मकं ताम्बूलं श्रीनृसिंहाय समर्पयामि नमः।

मन्त्र– जय जय श्रीनृसिंह (८ अक्षर)। 'वर्ण-माला' में इस मन्त्र का 'जप' आगे दी गई विधि के अनुसार करना चाहिए।

विशेष : 'नृसिंह'-मन्त्र का जप करने से सभी प्रकार के भयों से रक्षा होती है। इस मन्त्र से अभिमन्त्रित भस्म को शरीर में लगाने से विषादि का नाश हो जाता है। घोर अभिचार, उन्माद, महा-उत्पात एवं महान् भय होने पर 'नृसिंह भगवान्' का ध्यान करते हुए मन्त्र का जप करे, तो दुःखों से छुटकारा होता है।

ॐ

१. अं जय जय श्रीनृसिंह अं
२. आं जय जय श्रीनृसिंह आं
३. इं जय जय श्रीनृसिंह इं
४. ईं जय जय श्रीनृसिंह ईं
५. उं जय जय श्रीनृसिंह उं
६. ऊं जय जय श्रीनृसिंह ऊं
७. ऋं जय जय श्रीनृसिंह ऋं
८. ॠं जय जय श्रीनृसिंह ॠं
९. ऌं जय जय श्रीनृसिंह ऌं
१०. ॡं जय जय श्रीनृसिंह ॡं
११. एं जय जय श्रीनृसिंह एं
१२. ऐं जय जय श्रीनृसिंह ऐं
१३. ओं जय जय श्रीनृसिंह ओं
१४. औं जय जय श्रीनृसिंह औं
१५. अं जय जय श्रीनृसिंह अं
१६. अः जय जय श्रीनृसिंह अः
१७. कं जय जय श्रीनृसिंह कं
१८. खं जय जय श्रीनृसिंह खं
१९. गं जय जय श्रीनृसिंह गं
२०. घं जय जय श्रीनृसिंह घं
२१. ङं जय जय श्रीनृसिंह ङं
२२. चं जय जय श्रीनृसिंह चं
२३. छं जय जय श्रीनृसिंह छं
२४. जं जय जय श्रीनृसिंह जं
२५. झं जय जय श्रीनृसिंह झं
२६. ञं जय जय श्रीनृसिंह ञं
२७. टं जय जय श्रीनृसिंह टं
२८. ठं जय जय श्रीनृसिंह ठं
२९. डं जय जय श्रीनृसिंह डं
३०. ढं जय जय श्रीनृसिंह ढं
३१. णं जय जय श्रीनृसिंह णं
३२. तं जय जय श्रीनृसिंह तं
३३. थं जय जय श्रीनृसिंह थं
३४. दं जय जय श्रीनृसिंह दं
३५. धं जय जय श्रीनृसिंह धं
३६. नं जय जय श्रीनृसिंह नं
३७. पं जय जय श्रीनृसिंह पं
३८. फं जय जय श्रीनृसिंह फं
३९. बं जय जय श्रीनृसिंह बं
४०. भं जय जय श्रीनृसिंह भं
४१. मं जय जय श्रीनृसिंह मं
४२. यं जय जय श्रीनृसिंह यं
४३. रं जय जय श्रीनृसिंह रं
४४. लं जय जय श्रीनृसिंह लं
४५. वं जय जय श्रीनृसिंह वं
४६. शं जय जय श्रीनृसिंह शं
४७. षं जय जय श्रीनृसिंह षं
४८. सं जय जय श्रीनृसिंह सं
४९. हं जय जय श्रीनृसिंह हं
५०. ळं जय जय श्रीनृसिंह ळं

क्ष

इसके बाद 'विलोम'-क्रम से 'ळं' से 'अं' तक (५१ से १०० तक) 'जप' करे। फिर 'अष्ट-मातृका-वर्णों' (अं-कं-चं-टं-तं-पं-यं-शं) से १०१ से १०८ तक 'जप' करे। यथा-

१०१. अं जय जय श्रीनृसिंह अं
१०२. कं जय जय श्रीनृसिंह कं
१०३. चं जय जय श्रीनृसिंह चं
१०४. टं जय जय श्रीनृसिंह टं
१०५. तं जय जय श्रीनृसिंह तं
१०६. पं जय जय श्रीनृसिंह पं
१०७. यं जय जय श्रीनृसिंह यं
१०८. शं जय जय श्रीनृसिंह शं

होम- यथा-शक्ति 'जप' करने के बाद १. बिल्व-काष्ठ द्वारा प्रज्ज्वलित अग्नि में लवङ्ग-पुष्प अथवा बिल्व-पत्र और बिल्व-फल से होम करने से धन की प्राप्ति होती है। २. दूर्वा (दूब) से होम करने से आरोग्य-लाभ होता है।

५. 'श्रीवामनावतार'-नाम-मन्त्र-साधना

चतुर्थ महा-विद्या भगवती भुवनेश्वरी से उद्भूत
विश्व के संरक्षक भगवान् विष्णु का
पाँचवाँ अवतार 'श्रीवामनावतार'

भगवतीभुवनेश्वरी

जयन्ती :
भाद्रपद शुक्ला द्वादशी

ॐश्रीवामनावतारायनमः

चतुः समुद्राभरणा धरित्री, न्यासाय नाऽलं चरणस्य यस्य।
एकस्य नाऽन्यस्य पदं सुराणां, त्रि-विक्रमं सर्व-गतं स्मरामि ।।

अर्थात् चारों समुद्र जिसके आभूषण हैं, उस पृथ्वी पर जिनके पैर रखने के लिए जगह नहीं बची थी और जिनके दूसरे पग के लिए देव-लोक में भी स्थान नहीं बचा था, मैं उन्हीं सर्व-व्यापी त्रि-विक्रम वामनावतार भगवान् विष्णु को प्रणाम करता हूँ।

त्रयो-विंशत्यक्षर-'श्रीबलि-वामनावतार'-नाम-मन्त्र-साधना

नाम-माहात्म्य-महा-विद्या भुवनेश्वरी से उद्भूत श्रीवामन-विग्रह भगवान् विष्णु के नाम-मन्त्र-जप से सभी प्रकार के बन्धनों, दुर्गतियों, आपत्तियों से मुक्ति होती है।

विनियोग-ॐ अस्य श्रीवामनावतार-त्रयो-विंशत्यक्षर-मन्त्रस्य श्रीवाङ् ऋषिः। जगती छन्दः। श्रीबलि-वामन देवता। मम सर्व-आपत्ति-विनाशनाय जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास-शिरसि श्रीवाङ्वे-ऋषये नमः। मुखे जगती-छन्दसे नमः। हृदये श्रीबलि-वामनाय देवतायै नमः। मम सर्व-आपत्ति-विनाशनाय जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ।

कर-न्यास-ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः। नमो तर्जनीभ्यां स्वाहा। भगवते मध्यमाभ्यां वषट्। बलि-वामनाय अनामिकाभ्यां हुम्। सर्वापत्ति-विनाशनाय कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्।

षडङ्ग-न्यास-ॐ हृदयाय नमः। नमो शिरसे स्वाहा। भगवते शिखायै वषट्। बलि-वामनाय कवचाय हुम्। सर्वापत्ति-विनाशनाय नेत्र-त्रयाय वौषट्। ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं अस्त्राय फट्।

ध्यान-

पीताम्बरोत्तरीयोऽसौ, मौञ्जी-कौपीन-धृग्धरिः। कमण्डलुं च दध्यन्नं, दण्डं छत्रं करैर्दधत् ।
यज्ञोपवीती नीलाभो, ध्यातव्यश्छद्म-वामनः।।

अर्थात् मैं वामन का रूप धारण करनेवाले उन भगवान् विष्णु का ध्यान करता हूँ, जो नीली आभा से शोभायमान हैं, जिन्होंने उत्तरीय के रूप में पीताम्बर धारण कर रक्खा है, जो मौञ्जी-कौपीन धारण किए हैं तथा जिनके हाथों में कमण्डल, दही-अन्न को ग्रहण करनेवाला पात्र, दण्ड एवं छत्र है।

मानस-पूजा-

लं पृथिव्यात्मकं गन्धं श्रीबलि-वामनाय समर्पयामि नमः।
हं आकाशात्मकं पुष्पं श्रीबलि-वामनाय समर्पयामि नमः।
यं वाय्वात्मकं धूपं श्रीबलि-वामनाय घ्रापयामि नमः।
रं वह्न्यात्मकं दीपं श्रीबलि-वामनाय दर्शयामि नमः।
वं अमृतात्मकं नैवेद्यं श्रीबलि-वामनाय निवेदयामि नमः।
सं सर्वात्मकं ताम्बूलं श्रीबलि-वामनाय समर्पयामि नमः।

मन्त्र- ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं (२३ अक्षर)। 'वर्ण-माला' में इस मन्त्र का 'जप' आगे दी गई विधि के अनुसार करना चाहिए।

विशेष : अपने तीन पग से तीनों लोकों को नापनेवाले श्रीबलि-वामनावतार भगवान् विष्णु के त्रि-विक्रम स्वरूप का स्मरण करते हुए, एकाग्र मन से जब उक्त मन्त्र का जप किया जाता है, तब सभी प्रकार की आपदाओं, बाधाओं से मुक्ति प्राप्त होती है।

ॐ

१. अं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं अं
२. आं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं आं
३. इं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं इं
४. ईं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं ईं
५. उं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं उं
६. ऊं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं ऊं
७. ऋं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं ऋं
८. ॠं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं ॠं
९. लृं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं लृं
१०. लॄं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं लॄं
११. एं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं एं
१२. ऐं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं ऐं
१३. ओं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं ओं
१४. औं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं औं
१५. अं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं अं
१६. अः ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं अः
१७. कं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं कं
१८. खं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं खं
१९. गं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं गं
२०. घं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं घं
२१. ङं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं ङं
२२. चं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं चं
२३. छं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं छं
२४. जं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं जं
२५. झं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं झं
२६. ञं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं ञं
२७. टं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं टं
२८. ठं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं ठं
२९. डं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं डं
३०. ढं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं ढं
३१. णं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं णं
३२. तं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं तं

३३. थं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं थं
३४. दं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं दं
३५. धं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं धं
३६. नं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं नं
३७. पं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं पं
३८. फं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं फं
३९. बं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं बं
४०. भं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं भं
४१. मं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं मं
४२. यं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं यं
४३. रं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं रं
४४. लं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं लं
४५. वं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं वं
४६. शं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं शं
४७. षं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं षं
४८. सं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं सं
४९. हं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं हं
५०. ळं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं ळं

क्षौं

इसके बाद 'विलोम'-क्रम से 'ळं' से 'अं' तक (५१ से १०० तक) 'जप' करे। फिर 'अष्ट-मातृका-वर्णों' (अं-कं-चं-टं-तं-पं-यं-शं) से १०१ से १०८ तक 'जप' करे। यथा-

१०१. अं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं अं
१०२. कं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं कं
१०३. चं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं चं
१०४. टं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं टं
१०५. तं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं तं
१०६. पं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं पं
१०७. यं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं यं
१०८. शं ॐ नमो भगवते बलि-वामनाय सर्वापत्ति-विनाशनाय श्रीं शं

होम- यथा-शक्ति 'जप' करने के बाद १. घृत-युक्त खीर से होम करने से धन-प्राप्ति होती है। २. दही-चावल से होम करे, तो सभी प्रकार की दुर्गतियों से मुक्ति प्राप्त होती है। ३. पद्म-पुष्पों से होम करने से भय का नाश होता है।

६.'श्रीपरशुरामावतार'-नाम-मन्त्र-साधना

तृतीया महा-विद्या भगवती षोडशी से उद्‌भूत
विश्व के संरक्षक भगवान् विष्णु का
छठवाँ अवतार 'श्रीपरशुरामावतार'

भगवतीषोडशी

जयन्ती :
वैशाख शुक्ला तृतीया

ॐश्रीपरशुरामावतारायनमः

त्रिः सप्त-वारं नृपतीन् निहत्य, यस्तर्पणं रक्त-मयं पितृभ्यः।
चकार दोर्दण्ड-बलेन सम्यक्, तमादि-शूरं प्रणमामि भक्त्या।।

अर्थात् जिन्होंने अपने भुज-बल से इक्कीस बार दुष्ट राजाओं का संहार करके रक्त-जल द्वारा पितरों का तर्पण किया था, उन्हीं आदि वीर परशुरामावतार भगवान् विष्णु की मैं वन्दना करता हूँ।

पञ्च-दशाक्षर-'श्रीपरशुरामावतार'-नाम-मन्त्र-साधना

नाम-माहात्म्य-महा-विद्या षोडशी से उद्भूत श्रीपरशुराम-विग्रह भगवान् विष्णु के नाम-मन्त्र-जप से दरिद्रता एवं शत्रुओं का नाश होता है, भूमि-धन-ज्ञान की प्राप्ति होती है और राज-बन्धन से मुक्ति प्राप्त होती है।

कर-न्यास-ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः। रां रां तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ रां रां मध्यमाभ्यां वषट्। ॐ परशु-हस्ताय अनामिकाभ्यां हुम्। नमः करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्।

षडङ्ग-न्यास-ॐ हृदयाय नमः। रां रां शिरसे स्वाहा। ॐ रां रां शिखायै वषट्। ॐ परशु-हस्ताय कवचाय हुम्। नमः अस्त्राय फट्।

१. सात्विक ध्यान-

सात्विकं श्वेत-वर्णं च, भस्मोद्धूलित-विग्रहम् ।
अग्निहोत्र-स्थालासीनं, नाना-मुनि-गणावृतम् ।।
कम्बलासनमारूढं, स्वर्ण-तार-कुशांगुलिम् ।
श्वेत-वस्त्र-द्वयोपेतं, जुह्वन्तं शान्त-मानसम् ।।

२. राजस ध्यान-

ध्यायेच्च राजसं रामं, कुंकुमारुण-विग्रहम् ।
किरीटिनं कुण्डलिनं, परश्वब्ज-वराभयान् ।।
करैर्दधन्तं तरुणं, विप्र - क्षत्रौघ - सम्वृतम् ।
पीताम्बर-धरं काम-रूपं बाला-निरीक्षितम् ।।

३. तामस ध्यान-

ध्यायेच्च तामसं क्षत्र-रुधिराक्त-परश्वधम् ।
आरक्त-नेत्रं कर्णस्थ-ब्रह्म-सूत्रं यम-प्रभम् ।।
धनुष्टङ्कार - सङ्क्षोष - सन्त्रस्त - भुवन - त्रयम् ।
चतुर्बाहुं मुशलिनं, संक्रुद्ध - भ्रातृ-संयुतम् ।।

मानस-पूजा-लं पृथिव्यात्मकं गन्धं श्रीपरशु-रामाय समर्पयामि नमः। हं आकाशात्मकं पुष्पं श्रीपरशु-रामाय समर्पयामि नमः। यं वाय्वात्मकं धूपं श्रीपरशु-रामाय घ्रापयामि नमः। रं वह्न्यात्मकं दीपं श्रीपरशु-रामाय दर्शयामि नमः। वं अमृतात्मकं नैवेद्यं श्रीपरशु-रामाय निवेदयामि नमः। सं सर्वात्मकं ताम्बूलं श्रीपरशु-रामाय समर्पयामि नमः।

मन्त्र- ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः (१५ अक्षर)। जैसी कामना हो, उसी प्रकार भगवान् परशुराम का ध्यान कर 'वर्ण-माला' में इस मन्त्र का 'जप' आगे दी गई विधि के अनुसार करना चाहिए।

ॐ

१. अं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः अं
२. आं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः आं
३. इं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः इं
४. ईं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः ईं
५. उं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः उं
६. ऊं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः ऊं
७. ऋं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः ऋं
८. ॠं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः ॠं
९. ऌं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः ऌं
१०. ॡं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः ॡं
११. एं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः एं
१२. ऐं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः ऐं
१३. ओं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः ओं
१४. औं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः औं
१५. अं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः अं
१६. अः ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः अः
१७. कं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः कं
१८. खं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः खं
१९. गं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः गं
२०. घं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः घं
२१. ङं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः ङं
२२. चं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः चं
२३. छं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः छं
२४. जं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः जं
२५. झं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः झं
२६. ञं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः ञं
२७. टं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः टं
२८. ठं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः ठं
२९. डं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः डं
३०. ढं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः ढं
३१. णं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः णं
३२. तं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः तं

३३. थं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः थं

३४. दं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः दं

३५. धं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः धं

३६. नं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः नं

३७. पं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः पं

३८. फं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः फं

३९. बं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः बं

४०. भं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः भं

४१. मं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः मं

४२. यं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः यं

४३. रं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः रं

४४. लं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः लं

४५. वं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः वं

४६. शं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः शं

४७. षं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः षं

४८. सं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः सं

४९. हं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः हं

५०. ळं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः ळं

क्षं

इसके बाद 'विलोम'-क्रम से 'ळं' से 'अं' तक (५१ से १०० तक) 'जप' करे। फिर 'अष्ट-मातृका-वर्णों' (अं-कं-चं-टं-तं-पं-यं-शं) से १०१ से १०८ तक 'जप' करे। यथा-

१०१. अं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः अं

१०२. कं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः कं

१०३. चं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः चं

१०४. टं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः टं

१०५. तं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः तं

१०६. पं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः पं

१०७. यं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः यं

१०८. शं ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः शं

होम- यथा-शक्ति 'जप' करने के बाद १. गो-दुग्ध, मधु, दधि और घृत-इन सभी वस्तुओं से अलग-अलग होम करे, तो आयु, बल, आरोग्य और समृद्धि प्राप्त होती है। २. खीर और शहद से होम करे, तो मृत्यु का निवारण होता है। ३. दधि-मिश्रित शहद से होम करे, तो सौभाग्य एवं धन की प्राप्ति होती है। ४. केनल शर्करा से होम करे, तो शत्रु का स्तम्भन होता है।

७. 'श्रीरामावतार'-नाम-मन्त्र-साधना

नवम महा-विद्या भगवती मातङ्गी से उद्भूत
विश्व के संरक्षक भगवान् विष्णु का
सातवाँ अवतार 'श्रीरामावतार'

भगवतीमातङ्गी

जयन्ती :
चैत्र शुक्ला नवमी

ॐश्रीरामावतारायनमः

कुले रघूणां समवाप्य जन्म, विधाय सेतुं जलधेर्जलान्तः ।
लङ्केश्वरं यः शमयाञ्चकार, सीता-पतिं तं प्रणमामि भक्त्या ।।

अर्थात् जिन्होंने रघु-कुल में जन्म लेकर और समुद्र के जल में सेतु का निर्माण करके लङ्केश्वर रावण का वध किया, मैं उन सांता-पति रामावतार भगवान् विष्णु को भक्ति-पूर्वक प्रणाम करता हूँ।

षडक्षर-'श्रीरामावतार'-नाम-मन्त्र-साधना

नाम-माहात्म्य-महा-विद्या मातङ्गी से उद्भूत श्रीराम-विग्रह भगवान् विष्णु के नाम-मन्त्र-जप से सभी प्रकार की कामनाएँ पूरी होती हैं और शीघ्र वाक्-सिद्धि होती है।

विनियोग-ॐ अस्य श्रीरामावतार-षडक्षर-मन्त्रस्य श्रीब्रह्मा ऋषिः। गायत्री छन्दः। श्रीरामः देवता। मम सर्व-कामना-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास-शिरसि श्रीब्रह्मणे-ऋषये नमः। मुखे गायत्री-छन्दसे नमः। हृदये श्रीरामाय देवतायै नमः। मम सर्व-कामना-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ।

कर-न्यास-रां अंगुष्ठाभ्यां नमः। रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। रूं मध्यमाभ्यां वषट्। रैं अनामिकाभ्यां हुम्। रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। रः करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्।

षडङ्ग-न्यास-रां हृदयाय नमः। रीं शिरसे स्वाहा। रूं शिखायै वषट्। रैं कवचाय हुम्। रौं नेत्र-त्रयाय वौषट्। रः अस्त्राय फट्।

मन्त्र-न्यास-ब्रह्म-रन्ध्रे रां नमः। भ्रुवोर्मध्ये रां नमः। हृदि मां नमः। नाभौ यं नमः। लिङ्गे नं नमः। पादयो मं नमः।

ध्यान-

कालाम्भोधर-कान्ति-कान्तमनिशं वीरासनाध्यासनीम्,
मुद्रां ज्ञान - मयीं दधानमपरं हस्ताम्बुजं जानुनी।
सीतां पार्श्व-गतां सरोरुह-करां विद्युन्निभां राघवम्,
पश्यन्तं मुकुटाङ्गदादि-विविधाकल्पोज्ज्वलाङ्गं भजे।।

अर्थात् काले मेघ के समान कृष्ण-वर्ण, अत्यन्त कोमल अङ्ग, वीरासन में बैठे हुए, एक हाथ में 'ज्ञान-मुद्रा' और दूसरा कर-कमल घुटने पर। बगल में पद्म-हस्ता, विद्युत्-जैसी आभावाली सीता जी। मुकुट, अङ्गद आदि विविध प्रकार के रत्नाभूषणों से विभूषित और सीता जी को देखनेवाले राघव भगवान् श्रीराम का मैं भजन करता हूँ।

मानस-पूजा- लं पृथिव्यात्मकं गन्धं श्रीरामाय समर्पयामि नमः। हं आकाशात्मकं पुष्पं श्रीरामाय समर्पयामि नमः। यं वाय्वात्मकं धूपं श्रीरामाय घ्रापयामि नमः। रं वह्न्यात्मकं दीपं श्रीरामाय दर्शयामि नमः। वं अमृतात्मकं नैवेद्यं श्रीराम-भद्राय निवेदयामि नमः। सं सर्वात्मकं ताम्बूलं श्रीरामाय समर्पयामि नमः।

मन्त्र- रां रामाय नमः (६ अक्षर)। 'वर्ण-माला' में इस मन्त्र का 'जप' आगे दी गई विधि के अनुसार करना चाहिए।

विशेष : भगवान् श्रीराम का उक्त षडक्षर मन्त्र छः प्रकार का है-१. रां रामाय नमः, २. क्लीं रामाय नमः, ३. ह्रीं रामाय नमः, ४. ऐं रामाय नमः, ५. श्रीं रामाय नमः, ६. ॐ रामाय नमः। इन सभी मन्त्रों के ऋषि भी अलग-अलग हैं। यथा क्रमशः १. ब्रह्मा, २. विश्वामित्र (सम्मोहन), ३. शक्ति, ४. दक्षिणामूर्ति, ५. अगस्त्य, ६. श्री शिव। ये सभी मन्त्र सर्व-कामना-पूरक हैं।

ॐ

१. अं रां रामाय नमः अं
२. आं रां रामाय नमः आं
३. इं रां रामाय नमः इं
४. ईं रां रामाय नमः ईं
५. उं रां रामाय नमः उं
६. ऊं रां रामाय नमः ऊं
७. ऋं रां रामाय नमः ऋं
८. ॠं रां रामाय नमः ॠं
९. ऌं रां रामाय नमः ऌं
१०. ॡं रां रामाय नमः ॡं
११. एं रां रामाय नमः एं
१२. ऐं रां रामाय नमः ऐं
१३. ओं रां रामाय नमः ओं
१४. औं रां रामाय नमः औं
१५. अं रां रामाय नमः अं
१६. अः रां रामाय नमः अः
१७. कं रां रामाय नमः कं
१८. खं रां रामाय नमः खं
१९. गं रां रामाय नमः गं
२०. घं रां रामाय नमः घं
२१. ङं रां रामाय नमः ङं
२२. चं रां रामाय नमः चं
२३. छं रां रामाय नमः छं
२४. जं रां रामाय नमः जं
२५. झं रां रामाय नमः झं
२६. ञं रां रामाय नमः ञं
२७. टं रां रामाय नमः टं
२८. ठं रां रामाय नमः ठं
२९. डं रां रामाय नमः डं
३०. ढं रां रामाय नमः ढं
३१. णं रां रामाय नमः णं
३२. तं रां रामाय नमः तं
३३. थं रां रामाय नमः थं
३४. दं रां रामाय नमः दं
३५. धं रां रामाय नमः धं
३६. नं रां रामाय नमः नं
३७. पं रां रामाय नमः पं
३८. फं रां रामाय नमः फं
३९. बं रां रामाय नमः बं
४०. भं रां रामाय नमः भं
४१. मं रां रामाय नमः मं
४२. यं रां रामाय नमः यं
४३. रं रां रामाय नमः रं
४४. लं रां रामाय नमः लं
४५. वं रां रामाय नमः वं
४६. शं रां रामाय नमः शं
४७. षं रां रामाय नमः षं
४८. सं रां रामाय नमः सं
४९. हं रां रामाय नमः हं
५०. ळं रां रामाय नमः ळं

क्षं

इसके बाद 'विलोम'-क्रम से 'ळं' से 'अं' तक (५१ से १०० तक) 'जप' करे। फिर 'अष्ट-मातृका-वर्णों' (अं-कं-चं-टं-तं-पं-यं-शं) से १०१ से १०८ तक 'जप' करे। यथा-

१०१. अं रां रामाय नमः अं
१०२. कं रां रामाय नमः कं
१०३. चं रां रामाय नमः चं
१०४. टं रां रामाय नमः टं
१०५. तं रां रामाय नमः तं
१०६. पं रां रामाय नमः पं
१०७. यं रां रामाय नमः यं
१०८. शं रां रामाय नमः शं

होम- यथा-शक्ति 'जप' करने के बाद १. यश, कान्ति और लक्ष्मी-प्राप्ति के लिए जाती-पुष्प द्वारा होम करना चाहिए। २. धन-धान्यादि सम्पत्ति-लाभ के लिए पद्म द्वारा होम करना चाहिए। ३. लक्ष्मी-लाभ के लिए बिल्व-फल द्वारा होम करना चाहिए। ४. दीर्घायु के लिए दूर्वा (दूब) द्वारा होम करना चाहिए। ५. बुद्धि-वृद्धि के लिए नए खिले हुए पलाश पुष्पों के द्वारा होम करना चाहिए।

८. 'श्रीकृष्णावतार'-नाम-मन्त्र-साधना

आद्या महा-विद्या भगवती काली से उद्भूत
विश्व के संरक्षक भगवान् विष्णु का
आठवाँ अवतार 'श्रीकृष्णावतार'

भगवतीकाली

जयन्ती :
भाद्रपद कृष्णा अष्टमी

ॐश्रीकृष्णावतारायनमः

विष्णुं शारद-चन्द्र-कोटि-सदृशं शङ्खं रथाङ्गं गदामम्भोजम् ।
दधतं सिताब्ज-निलयं कान्त्या जगन्मोहनम् ।।
आबद्धाङ्गद-हार-कुण्डल-महा-मौलिं स्फुरत्-कङ्कणम् ।
श्रीवत्साङ्कमुदार-कौस्तुभ-धरं वन्दे मुनीन्द्रैः स्तुतम् ।।

अर्थात् शरत्-कालीन कोटि चन्द्रों के समान उज्ज्वल और मधुर कान्तिवाले, शङ्ख-चक्र- गदा-पद्म-धारी, चतुर्भुज एवं श्वेत-पद्म पर विराजमान, अपनी कान्ति से सारे संसार को मुग्ध करनेवाले वसुदेव-पुत्र कृष्णावतार भगवान् विष्णु की मैं वन्दना करता हूँ। वे अङ्गद, हार, कुण्डल, मुकुट और कङ्कणादि आभूषणों से विभूषित हैं। वक्षः-स्थल में श्री वत्स-चिह्न और गले में कौस्तुभ मणि धारण किए हैं। श्रेष्ठ मुनि लोग उनकी स्तुति करते रहते हैं।

अष्टाक्षर-'श्रीकृष्णावतार'-नाम-मन्त्र-साधना

नाम-माहात्म्य-महा-विद्या काली से उद्भूत श्रीकृष्ण-विग्रह भगवान् विष्णु के नाम-मन्त्र-जप से साधक सर्वत्र पूजनीय होता है। उसकी बड़ी-से-बड़ी विपत्ति दूर हो जाती है। उसके शत्रु नष्ट हो जाते हैं और उसे किसी का भय नहीं रहता। इस प्रकार प्रस्तुत अष्टाक्षर-मन्त्र 'कल्प-वृक्ष' के समान है।

विनियोग-ॐ अस्य श्रीकृष्णावतार-अष्टाक्षर-मन्त्रस्य श्रीनारद ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। श्रीकृष्ण देवता। मम सर्व-कामना-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास-शिरसि श्रीनारद-ऋषये नमः। मुखे अनुष्टुप्-छन्दसे नमः। हृदये श्रीकृष्णाय देवतायै नमः। मम सर्व-कामना-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ।

कर-न्यास-क्लां अंगुष्ठाभ्यां नमः। क्लीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। क्लूं मध्यमाभ्यां वषट्। क्लैं अनामिकाभ्यां हुम्। क्लौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। क्लः करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्।

षडङ्ग-न्यास-क्लां हृदयाय नमः। क्लीं शिरसे स्वाहा। क्लूं शिखायै वषट्। क्लैं कवचाय हुम्। क्लौं नेत्र-त्रयाय वौषट्। क्लः अस्त्राय फट्।

ध्यान-

कलाय-कुसुम-श्यामं, वृन्दावन-गतं हरिम् ।
गोप-गोपी-गवावीतं, पीत-वस्त्र-युगावृतम् ।।
नानालङ्कार-सुभगं, कौस्तुभोद्भासि-वक्षसम् ।
सनकादि-मुनि-श्रेष्ठः, संस्तुतं परया मुदा।
शङ्ख-चक्र-लसद्-बाहुं, वेणु-हस्त-द्वयेरितम् ।।

अर्थात् कलाय-पुष्प जैसे श्याम-वर्ण, वृन्दावन-वासी, गो-गोपी एवं बछड़ों से वेष्ठित, दो पीताम्बर-धारी, विविध आभूषणों से शोभायमान भगवान् का ध्यान करे। उनका वक्ष-स्थल कौस्तुभ-मणि से प्रकाशित है और सनकादि श्रेष्ठ मुनि अत्यानन्द के साथ उनकी स्तुति कर रहे हैं। भगवान् अपने एक हाथ में शङ्ख, दूसरे में चक्र लिए हैं और अन्य दो हाथों से वंशी बजा रहे हैं।

मानस-पूजा- लं पृथिव्यात्मकं गन्धं श्रीकृष्णाय समर्पयामि नमः। हं आकाशात्मकं पुष्पं श्रीकृष्णाय समर्पयामि नमः। यं वाय्वात्मकं धूपं श्रीकृष्णाय घ्रापयामि नमः। रं वह्न्यात्मकं दीपं श्रीकृष्णाय दर्शयामि नमः। वं अमृतात्मकं नैवेद्यं श्रीकृष्णाय निवेदयामि नमः। सं सर्वात्मकं ताम्बूलं श्रीकृष्णाय समर्पयामि नमः।

मन्त्र- श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा। (८ अक्षर)। 'वर्ण-माला' में इस मन्त्र का 'जप' आगे दी गई विधि के अनुसार करना चाहिए।

विशेष : वर्षा की कामना हेतु वृन्दावन में विराजमान भगवान् कृष्ण का ध्यान कर १००८ बार उक्त मन्त्र का जप करे, तो वृष्टि होती है।

ॐ

१. अं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा अं
२. आं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा आं
३. इं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा इं
४. ईं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा ईं
५. उं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा उं
६. ऊं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा ऊं
७. ऋं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा ऋं
८. ॠं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा ॠं
९. ऌं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा ऌं
१०. ॡं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा ॡं
११. एं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा एं
१२. ऐं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा ऐं
१३. ओं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा ओं
१४. औं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा औं
१५. अं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा अं
१६. अः श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा अः
१७. कं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा कं
१८. खं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा खं
१९. गं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा गं
२०. घं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा घं
२१. ङं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा ङं
२२. चं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा चं
२३. छं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा छं
२४. जं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा जं
२५. झं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा झं
२६. ञं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा ञं
२७. टं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा टं
२८. ठं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा ठं
२९. डं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा डं
३०. ढं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा ढं
३१. णं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा णं
३२. तं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा तं
३३. थं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा थं
३४. दं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा दं
३५. धं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा धं
३६. नं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा नं
३७. पं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा पं
३८. फं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा फं
३९. बं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा बं
४०. भं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा भं
४१. मं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा मं
४२. यं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा यं
४३. रं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा रं
४४. लं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा लं
४५. वं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा वं
४६. शं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा शं
४७. षं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा षं
४८. सं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा सं
४९. हं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा हं
५०. ळं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा ळं

क्षीं

इसके बाद 'विलोम'-क्रम से 'ळं' से 'अं' तक (५१ से १०० तक) 'जप' करे। फिर 'अष्ट-मातृका-वर्णों' (अं-कं-चं-टं-तं-पं-यं-शं) से १०१ से १०८ तक 'जप' करे। यथा-

१०१. अं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा अं
१०२. कं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा कं
१०३. चं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा चं
१०४. टं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा टं
१०५. तं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा तं
१०६. पं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा पं
१०७. यं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा यं
१०८. शं श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा शं

होम- यथा-शक्ति 'जप' करने के बाद पलाश-पुष्पों अथवा दुग्ध-युक्त बिल्व-समिधा से हवन करे, तो सभी कामनाओं की पूर्ति होती है।

९. 'श्रीबुद्धावतार'-नाम-मन्त्र-साधना

दशम महा-विद्या भगवती कमला से उद्भूत
विश्व के संरक्षक भगवान् विष्णु का
नवाँ अवतार 'श्रीबुद्धावतार'

भगवतीकमला

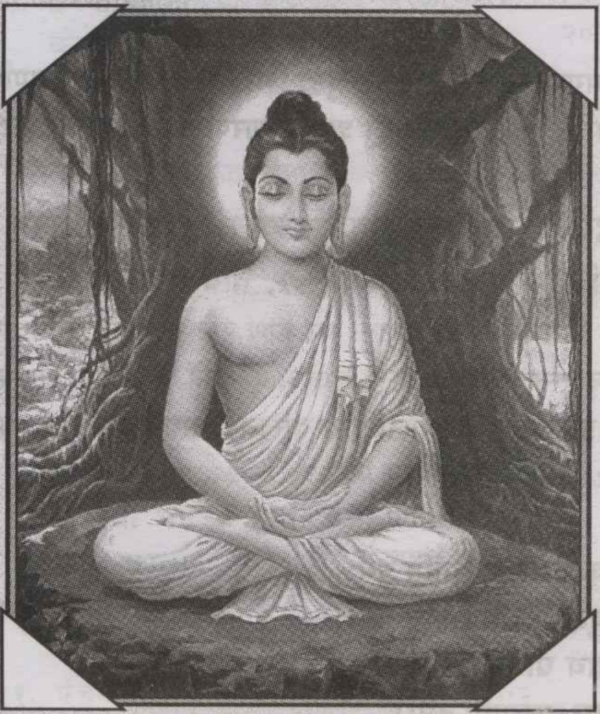

जयन्ती :
आषाढ़ शुक्ला नवमी

ॐ श्रीबुद्धावतारायनमः

पुरा पुराणामसुरान् विजेतुं, सम्भावयन् चीवर-चिह्न-वेशम् ।
चकार य; शास्त्रममोघ-कल्पं, तं मूल-भूतं प्रणतोऽस्मि बुद्धम् ।।

अर्थात् जिन्होंने असुरों पर देवताओं की विजय के लिए चीवर अर्थात् भिक्षुकों का वेश धारण करके शास्त्रों को अमोघ रूप प्रदान किया, मैं उन बुद्धावतार भगवान् विष्णु की वन्दना करता हूँ।

द्वा-त्रिंशदक्षर-'श्रीबुद्धावतार'-नाम-मन्त्र-साधना

नाम-माहात्म्य–महा-विद्या कमला से उद्भूत श्रीबुद्ध-विग्रह भगवान् विष्णु के नाम-मन्त्र-जप से सभी लोग वशीभूत होते हैं, सभी प्रकार के उपद्रव शान्त होते हैं और दुःख दूर होते हैं।

कर-न्यास–नमो अंगुष्ठाभ्यां नमः। भगवते तर्जनीभ्यां स्वाहा। बुद्ध मध्यमाभ्यां वषट्। संसारार्णव-तारक अनामिकाभ्यां हुम्। कलि-कालादहं भीतः कनिष्ठाभ्यां वौषट्। शरण्यं शरणं गतः करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्।

षडङ्ग-न्यास–नमो हृदयाय नमः। भगवते शिरसे स्वाहा। बुद्ध शिखायै वषट्। संसारार्णव-तारक कवचाय हुम्। कलि-कालादहं भीतः नेत्र-त्रयाय वौषट्। शरण्यं शरणं गतः अस्त्राय फट्।

ध्यान–

पद्मे पद्मासनस्थं च, ऊर्वोर्न्यस्त-कर-द्वयं। गौरं मुण्डित-सर्वाङ्गं, ध्यान-स्तिमित-लोचनम् ।।

पुस्तकासक्त-हस्तैश्च, नाना-शिष्यैश्च शोभितं। इन्द्रादि-लोकपालैश्च, ताम्र-वर्णाम्बरावृतम् ।।

अर्थात् पद्मासन पर कमल-मुद्रा से विराजमान और घुटनों पर हाथ रखे हुए, गौर-वर्णवाले, 'मुण्डित' शरीरवाले, ध्यान-मुद्रा में विराजमान मुस्काते हुए नेत्रोंवाले, हाथों में पुस्तकों को चाव से लिए हुए, विविध प्रकार के शिष्यों से शोभायमान और इन्द्रादि लोक-पालों द्वारा वन्दित, 'ताम्र-वर्ण' गेरुए वस्त्र से शोभायमान भगवान् श्रीबुद्ध को नमो नमः।

मानस-पूजा–

लं पृथिव्यात्मकं गन्धं श्रीबुद्धाय समर्पयामि नमः।
हं आकाशात्मकं पुष्पं श्रीबुद्धाय समर्पयामि नमः।
यं वाय्वात्मकं धूपं श्रीबुद्धाय घ्रापयामि नमः।
रं वह्न्यात्मकं दीपं श्रीबुद्धाय दर्शयामि नमः।
वं अमृतात्मकं नैवेद्यं श्रीबुद्धाय निवेदयामि नमः।
सं सर्वात्मकं ताम्बूलं श्रीबुद्धाय समर्पयामि नमः।

मन्त्र– नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः (३२ अक्षर)। 'वर्ण-माला' में इस मन्त्र का 'जप' आगे दी गई विधि के अनुसार करना चाहिए।

विशेष : उक्त मन्त्र के अनुसार पहले मन-ही-मन यह भावना करनी चाहिए कि " संसार-सागर से उद्धार करनेवाले हे भगवान् बुद्ध! मैं कलि-युग में अधर्मी काल से भयभीत हूँ। आप शरण देने में समर्थ हैं। मैं आपकी शरण में आया हूँ। " फिर उक्त मन्त्र का जप कर अपने अभीष्ट कार्य को सम्पन्न करना चाहिए। इस प्रकार करने से सभी प्रकार की बाधाएँ दूर होंगी और पूर्ण सफलता के साथ-साथ सुख-शान्ति की प्राप्ति भी होगी।

ॐ

१. अं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक!
कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः अं
२. आं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक!
कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः आं
३. इं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-
कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः इं
४. ईं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-
कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः ईं
५. उं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-
कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः उं
६. ऊं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक!
कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः ऊं
७. ऋं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक!
कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः ऋं
८. ॠं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक!
कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः ॠं
९. ऌं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक!
कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः ऌं
१०. ॡं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक!
कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः ॡं
११. एं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-
कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः एं
१२. ऐं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-
कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः ऐं
१३. ओं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक!
कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः ओं
१४. औं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक!
कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः औं
१५. अं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक!
कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः अं
१६. अः नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक!
कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः अः
१७. कं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक!
कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः कं
१८. खं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक!
कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः खं
१९. गं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-
कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः गं
२०. घं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-
कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः घं
२१. ङं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक!
कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः ङं
२२. चं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक!
कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः चं
२३. छं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-
कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः छं
२४. जं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक!
कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः जं
२५. झं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक!
कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः झं
२६. ञं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक!
कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः ञं
२७. टं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-
कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः टं
२८. ठं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-
कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः ठं
२९. डं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-
कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः डं
३०. ढं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-
कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः ढं
३१. णं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक!
कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः णं
३२. तं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-
कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः तं

३३. थं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः थं

३४. दं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः दं

३५. धं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः धं

३६. नं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः नं

३७. पं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः पं

३८. फं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः फं

३९. बं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः बं

४०. भं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः भं

४१. मं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः मं

४२. यं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः यं

४३. रं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः रं

४४. लं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः लं

४५. वं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः वं

४६. शं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः शं

४७. षं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः षं

४८. सं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः सं

४९. हं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः हं

५०. ळं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः ळं

क्ष

इसके बाद 'विलोम'-क्रम से 'ळं' से 'अं' तक (५१ से १०० तक) 'जप' करे। फिर 'अष्ट-मातृका-वर्णों' (अं-कं-चं-टं-तं-पं-यं-शं) से १०१ से १०८ तक 'जप' करे। यथा-

१०१.अं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः अं

१०२.कं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः कं

१०३.चं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः चं

१०४.टं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः टं

१०५.तं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः तं

१०६.पं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः पं

१०७.यं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः यं

१०८.शं नमो भगवते बुद्ध, संसारार्णव-तारक! कलि-कालादहं भीतः, शरण्यं शरणं गतः शं

होम- यथा-शक्ति 'जप' करने के बाद घृत-युक्त चावल से हवन करे, तो सभी कामनाओं की पूर्ति होती है। वाक् आदि सिद्धियाँ प्राप्त होकर सभी वशीभूत होते हैं। भूत-प्रेतादि एवं अन्य सभी प्रकार के उपद्रव शान्त होते हैं। ध्यान रहे कि भगवान् बुद्ध की साधना में मन से भी दूसरों को दुःख न देने का भाव होना चाहिए।

१०. 'श्रीकल्कि-अवतार'-नाम-मन्त्र-साधना

भगवती श्रीदुर्गा से उद्भूत
विश्व के संरक्षक भगवान् विष्णु का
दसवाँ अवतार 'श्रीकल्कि-अवतार'

भगवतीदुर्गा

जयन्ती :
मार्गशीर्ष शुक्ला तृतीया

ॐश्रीकल्कि-अवतारायनमः

कल्पावसाने निखिलैः खुरैः स्वैः, सङ्क्ष्ट्यामास निमेष-मात्रात्।
यस्तेजसा निर्दहतीति भीमो, विश्वात्मकं तं तुरगं भजामः।।

अर्थात् युगों की समाप्ति पर, जिन्होंने अपने खुरों के तीक्ष्ण प्रहार से सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को विदीर्ण कर दिया और जिनके तेज से विश्व जल उठा, मैं उन तीव्र-गामी अश्वों अर्थात् तीक्ष्ण मन-विचारवाले कल्कि-अवतार भगवान् विष्णु को प्रणाम करता हूँ।

षडक्षर-'श्रीकल्कि'-नाम-मन्त्र-साधना

नाम-माहात्म्य-भगवती दुर्गा से उद्‌भूत श्रीकल्कि-विग्रह भगवान् विष्णु के नाम-मन्त्र-जप से कलि-युग में पापियों, दुष्टों के कपट-पूर्ण कार्यों एवं आतङ्क से रक्षा होती है।

कर-न्यास-कं अंगुष्ठाभ्यां नमः। कं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ल्किं मध्यमाभ्यां वषट्। नं अनामिकाभ्यां हुम्। नं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। मं करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्।

षडङ्ग-न्यास-कं हृदयाय नमः। कं शिरसे स्वाहा। ल्किं शिखायै वषट्। नं कवचाय हुम्। नं नेत्र-त्रयाय वौषट्। मं अस्त्राय फट्।

ध्यान-

ध्याये नील-हयारूढ़ं, श्वेतोष्णीष-विराजितम्।
महा-मुद्राढ्य-हस्तं च, कौस्तुभोद्दाम-कण्ठकम्।।
मर्दयन्तं म्लेच्छ-गणं, क्रोध-पूरित-लोचनम्।
अन्तर्हितैर्देव-मुनि-गन्धर्वै-संस्तुतं हरिम् ।।

अर्थात् नीले घोड़े पर सवार, श्वेत पगड़ी से देदीप्यमान, 'महा-मुद्रा' अर्थात् भ्रू-मध्य की ओर देखने की मुद्रा में मुट्ठी बाँधे हुए हाथों की विशेष मुद्रावाले और कौस्तुभ-मणि के समान विशाल एवं चमकीली गर्दनवाले कल्कि-अवतार भगवान् विष्णु का मैं ध्यान करता हूँ, जो क्रोध-पूर्ण आखों से दुष्ट लोगों पर प्रहार करने में तल्लीन हैं और सर्व-कल्याण हेतु जिनकी गुप्त-रूप से देव-मुनि-गन्धर्व स्तुति कर रहे हैं।

मानस-पूजा-

लं पृथिव्यात्मकं गन्धं श्रीकल्किने समर्पयामि नमः।
हं आकाशात्मकं पुष्पं श्रीकल्किने समर्पयामि नमः।
यं वाय्वात्मकं धूपं श्रीकल्किने घ्रापयामि नमः।
रं वह्न्यात्मकं दीपं श्रीकल्किने दर्शयामि नमः।
वं अमृतात्मकं नैवेद्यं श्रीकल्किने निवेदयामि नमः।
सं सर्वात्मकं ताम्बूलं श्रीकल्किने समर्पयामि नमः।

मन्त्र- कं कल्किने नमः (६ अक्षर)। 'वर्ण-माला' में इस मन्त्र का 'जप' आगे दी गई विधि के अनुसार करना चाहिए।

विशेष : 'ॐ ऐं स्त्रौं कलि-दर्पघ्न्यै नमः', 'ॐ ऐं वैं कलि-कल्मष-नाशिन्यै नमः' इस प्रकार भगवती दुर्गा का स्मरण करते हुए भगवान् कल्कि के नाम-मन्त्र का जप करने से विशेष सफलता प्राप्त होती है।

ॐ

१. अं कं कल्किने नमः अं
२. आं कं कल्किने नमः आं
३. इं कं कल्किने नमः इं
४. ईं कं कल्किने नमः ईं
५. उं कं कल्किने नमः उं
६. ऊं कं कल्किने नमः ऊं
७. ऋं कं कल्किने नमः ऋं
८. ॠं कं कल्किने नमः ॠं
९. ऌं कं कल्किने नमः ऌं
१०. ॡं कं कल्किने नमः ॡं
११. एं कं कल्किने नमः एं
१२. ऐं कं कल्किने नमः ऐं
१३. ओं कं कल्किने नमः ओं
१४. औं कं कल्किने नमः औं
१५. अं कं कल्किने नमः अं
१६. अः कं कल्किने नमः अः
१७. कं कं कल्किने नमः कं
१८. खं कं कल्किने नमः खं
१९. गं कं कल्किने नमः गं
२०. घं कं कल्किने नमः घं
२१. ङं कं कल्किने नमः ङं
२२. चं कं कल्किने नमः चं
२३. छं कं कल्किने नमः छं
२४. जं कं कल्किने नमः जं
२५. झं कं कल्किने नमः झं
२६. ञं कं कल्किने नमः ञं
२७. टं कं कल्किने नमः टं
२८. ठं कं कल्किने नमः ठं
२९. डं कं कल्किने नमः डं
३०. ढं कं कल्किने नमः ढं
३१. णं कं कल्किने नमः णं
३२. तं कं कल्किने नमः तं
३३. थं कं कल्किने नमः थं
३४. दं कं कल्किने नमः दं
३५. धं कं कल्किने नमः धं
३६. नं कं कल्किने नमः नं
३७. पं कं कल्किने नमः पं
३८. फं कं कल्किने नमः फं
३९. बं कं कल्किने नमः बं
४०. भं कं कल्किने नमः भं
४१. मं कं कल्किने नमः मं
४२. यं कं कल्किने नमः यं
४३. रं कं कल्किने नमः रं
४४. लं कं कल्किने नमः लं
४५. वं कं कल्किने नमः वं
४६. शं कं कल्किने नमः शं
४७. षं कं कल्किने नमः षं
४८. सं कं कल्किने नमः सं
४९. हं कं कल्किने नमः हं
५०. ळं कं कल्किने नमः ळं

क्षं

इसके बाद 'विलोम'-क्रम से 'ळं' से 'अं' तक (५१ से १०० तक) 'जप' करे। फिर 'अष्ट-मातृका-वर्णों' (अं-कं-चं-टं-तं-पं-यं-शं) से १०१ से १०८ तक 'जप' करे। यथा-

१०१. अं कं कल्किने नमः अं
१०२. कं कं कल्किने नमः कं
१०३. चं कं कल्किने नमः चं
१०४. टं कं कल्किने नमः टं
१०५. तं कं कल्किने नमः तं
१०६. पं कं कल्किने नमः पं
१०७. यं कं कल्किने नमः यं
१०८. शं कं कल्किने नमः शं

होम- यथा-शक्ति 'जप' करने के बाद सिता (शक्कर)-सहित पायस से होम करे, तो शत्रु-नाश, सर्वत्र विजय की प्राप्ति एवं दिन-प्रति-दिन ऐश्वर्य की वृद्धि होती है।

'शारदा-तिलक तन्त्र' से संग्रहीत

'दशावतार'-स्तोत्रम्

आदाय वेदाः सकलाः समुद्रान्, निहत्य शङ्खासुरमत्युदग्रम् ।
दत्ताः पुरा येन पितामहाय, विष्णुं तमाद्यं भज मत्स्य-रूपम् ।।१
दिव्यामृतार्थं मथिते महाब्धौ, देवासुराभ्यां वासुकि-मन्दराभ्याम् ।
भूमेर्महा-वेग-विघूर्णितायास्तं कूर्ममाधार-गतं स्मरामि ।।२
समुद्र-काञ्ची सरिदुत्तरीया, वसुन्धरा मेरु - किरीटभारा ।
दंष्ट्रागतो येन समुद्धृता भूस्तमादिकोलं शरणं प्रपद्ये ।।३
भक्तार्त्ति-भङ्ग-क्षमया धिया यः, स्तम्भान्तरालादुदितो नृसिंहः।
रिपुं सुराणां निशितैर्नखाग्रैर्विदारयन्तं न च विस्मरामि ।।४
चतुः समुद्राभरणा धरित्री, न्यासाय नाऽलं चरणस्य यस्य।
एकस्य नाऽन्यस्य पदं सुराणां, त्रि-विक्रमं सर्व-गतं स्मरामि ।।५
त्रिः सप्त-वारं नृपतीन् निहत्य, यस्तर्पणं रक्त-मयं पितृभ्यः।
चकार दोर्दण्ड-बलेन सम्यक्, तमादि-शूरं प्रणमामि भक्त्या।।६
कुले रघूणां समवाप्य जन्म, विधाय सेतुं जलधेर्जलान्तः ।
लङ्केश्वरं यः शमयाञ्चकार, सीता-पतिं तं प्रणमामि भक्त्या ।।७
हलेन सर्वानसुरान् विकृष्य, चकार चूर्णं मुशल - प्रहारैः।
यः कृष्णमासाद्य बलं बलीयान्, भक्त्या भजे तं बल-भद्र-रामम् ।।८
पुरा पुराणामसुरान् विजेतुं, सम्भावयन् चीवर-चिह्न-वेशम् ।
चकार यः शास्त्रममोघ-कल्पं, तं मूल-भूतं प्रणतोऽस्मि बुद्धम् ।।९
कल्पावसाने निखिलैः खुरैः स्वैः, सङ्क्ट्टयामास निमेष-मात्रात्।
यस्तेजसा निर्दहतीति भीमो, विश्वात्मकं तं तुरगं भजामः।।१०
शङ्खं सु-चक्रं सु-गदां सरोजं, दोर्भिर्दधानं गरुडाधिरूढम् ।
श्रीवत्स-चिह्नं जगदादि-मूलं, तमाल-नीलं हृदि विष्णुमीडे।।११

विशेषः 'शारदा-तिलक-तन्त्र' का उक्त 'दशावतार-स्तोत्र' पीछे भगवान् विष्णु एवं उनके दशावतारों के चित्रों के साथ क्रमशः प्रकाशित हुआ है। उपरोक्त 'दशावतार'-स्तोत्रम् में भगवान् श्रीकृष्ण का उल्लेख नहीं है, उनके स्थान पर महा-विद्या भैरवी से उद्भूत 'श्रीबलराम' का उल्लेख है। उनकी स्तुति में स्पष्टतः कहा गया है कि–'जिन्होंने श्रीकृष्ण का बल प्राप्त कर, समस्त असुरों को अपने हल से खींचकर, मुशल-प्रहार से चूर-चूर कर दिया…।' इस प्रकार उक्त स्तुति में भगवान् श्रीकृष्ण के स्मरण के साथ-साथ तीन रामों (१. परशुराम, २. राम, ३. बलराम) का उल्लेख है।

'चण्डी'-पुस्तक-माला के कुछ उपयोगी अङ्क

➢ मन्त्र-कोष	२००/-
➢ दश महा-विद्या-साधना (५ पुस्तकें)	१५०/-
➢ मन्त्रात्मक सप्तशती	५००/-
➢ सार्थ चण्डी (श्रीदुर्गा सप्तशती)	२५०/-
➢ अद्भुत सप्तशती	१००/-
➢ हवनात्मक अद्भुत सप्तशती	३५/-
➢ साधना-रहस्य	४०/-
➢ दीक्षा-प्रकाश	३५/-
➢ श्रीकाली-कल्पतरु	७०/-
➢ श्रीतारा-कल्पतरु	३५/-
➢ श्रीबाला-कल्पतरु	३५/-
➢ श्रीशिव-शक्ति-अङ्क	४०/-
➢ श्रीबगला-साधना	३५/-
➢ श्रीरमा-पारायण	३५/-
➢ श्रीदुर्गा-कल्पतरु	१५/-
➢ नव-ग्रह-साधना	५०/-
➢ कुण्डलिनी-साधना	२५/-
➢ दीपावली-विशेषाङ्क	३०/-
➢ नवरात्र-कल्पतरु	५०/-
➢ शत-चण्डी-विधान	२५/-
➢ अघोर-पन्थ का निरूपण	२५/-
➢ श्रीमहा-गणपति-साधना	३५/-
➢ साधक का संवाद	२५/-
➢ धर्म-मार्ग पर	२५/-
➢ श्रीवैद्यनाथ-धाम-माहात्म्य	३०/-

प्राप्ति-स्थान

श्रीचण्डी-धाम

अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग-०६ ☆ फोन ०५३२-२५०२७८३, ९२३५९१००७१

रजि० सं० ३२९८१/५७

शास्त्र कहते हैं-

'नाम'-स्मरण

"……जो मनुष्य पवित्रता अथवा अपवित्रता का विचार न कर सदा-सर्वदा 'नाम'-स्मरण में रत रहता है, वह संसार के कष्टों से शीघ्र मुक्त हो जाता है।……"

"……भगवान् श्रीविष्णु के 'नाम'-स्मरण में न 'देश' का नियम है, न 'काल' का- यह निश्चय समझो।……"

"……'यज्ञ' में, 'दान' में, 'स्नान' में तथा 'जप' में भी 'काल' का विचार है किन्तु 'विष्णु' के 'नाम'-स्मरण में 'काल का विधान' बिल्कुल नहीं है।……"

"……न तो 'देश-काल' का नियम है और न 'पवित्रता' अथवा 'अपवित्रता' का विचार है, मनुष्य केवल 'राम'-नाम के कीर्तन से सांसारिक बन्धनों से मुक्त हो जाता है।……"

"……घूमता हुआ, बैठा हुआ, सोता हुआ, पीता हुआ, खाता हुआ तथा जपता हुआ 'कृष्ण-नाम'-स्मरण से मनुष्य दुष्प्रवृत्तियों से मुक्त हो जाता है।……"

प्रकाशक : श्रीऋतशील शर्मा, श्रीचण्डी-धाम, प्रयाग-६ ☎ ०९२३५९१००७१